।। ॐ श्री सद्‌गुरु परमात्मने नमः ।।

शिवोऽहम्

श्री सद्‌गुरु वचन ब्रह्माभयास

संग्रहकर्ता

ब्रह्मलीन योगिराज श्रीमद् परमहंस परिव्राजकाचार्य

श्रीत्रियब्रह्मनिष्ठ श्री श्री १००८

श्री महात्मा वचनरामजो महाराज

आश्रम मींढ़ा जिला नागौर (राजस्थान)

तच्छिष्य

श्री १०८ श्री स्वामी नित्यानन्दजी महाराज

आश्रम दिवराला जिला सीकर (राज०)

प्रकाशक

श्री स्वामी नित्यानन्दजी महाराज की शिष्या

संत बाई केवलानन्द

सर्वाधिकार सुरक्षित

महाशिवरात्री

दि. १२-२-९१

मूल्य

धर्म प्रेम

समर्पण

ब्रह्मलीन योगिराज श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ
श्री श्री १००८ श्री श्री महात्मा वचनरामजी महाराज
के पवित्र कोमलयुगल चरण कमलों में
सादर समर्पण

॥।
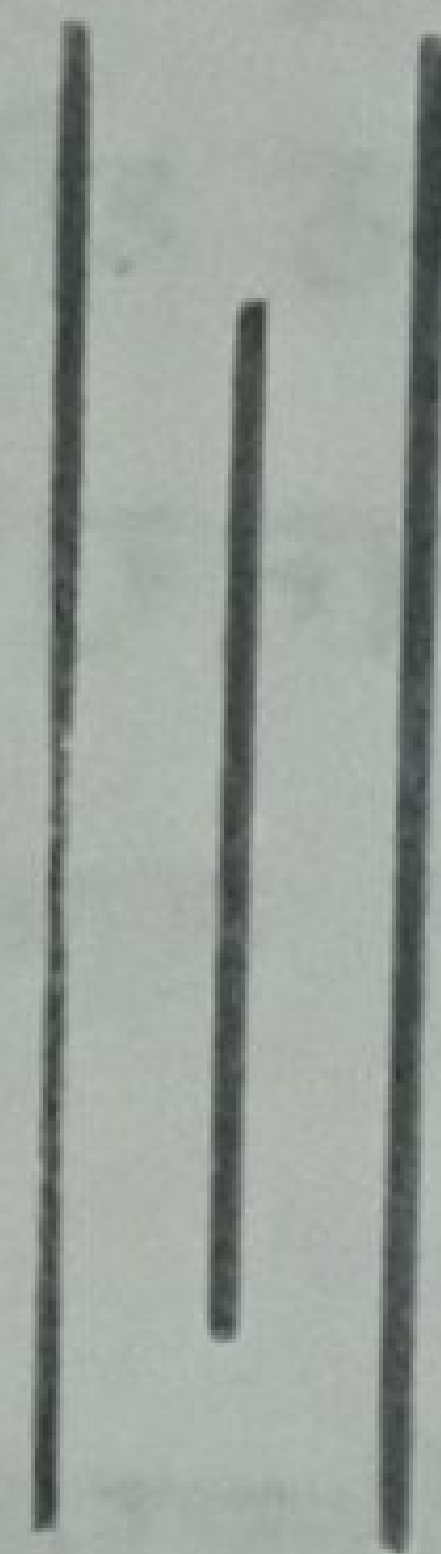
हे गुरुदेव आपने मुझ को ब्रह्माभ्यास बताया है।
श्रुति पुराण संत साक्षी निज अनुभव निश्चय कराया है॥
संग्रह कर वही शब्द सुमन लघु पुस्तक हार बनाया है।
करो स्वीकार समर्पण हे गुरु तुम्हारा तुम्हें चढाया है॥

आपका ही चरण सेवक
नित्यानन्द

श्री सद्गुरु
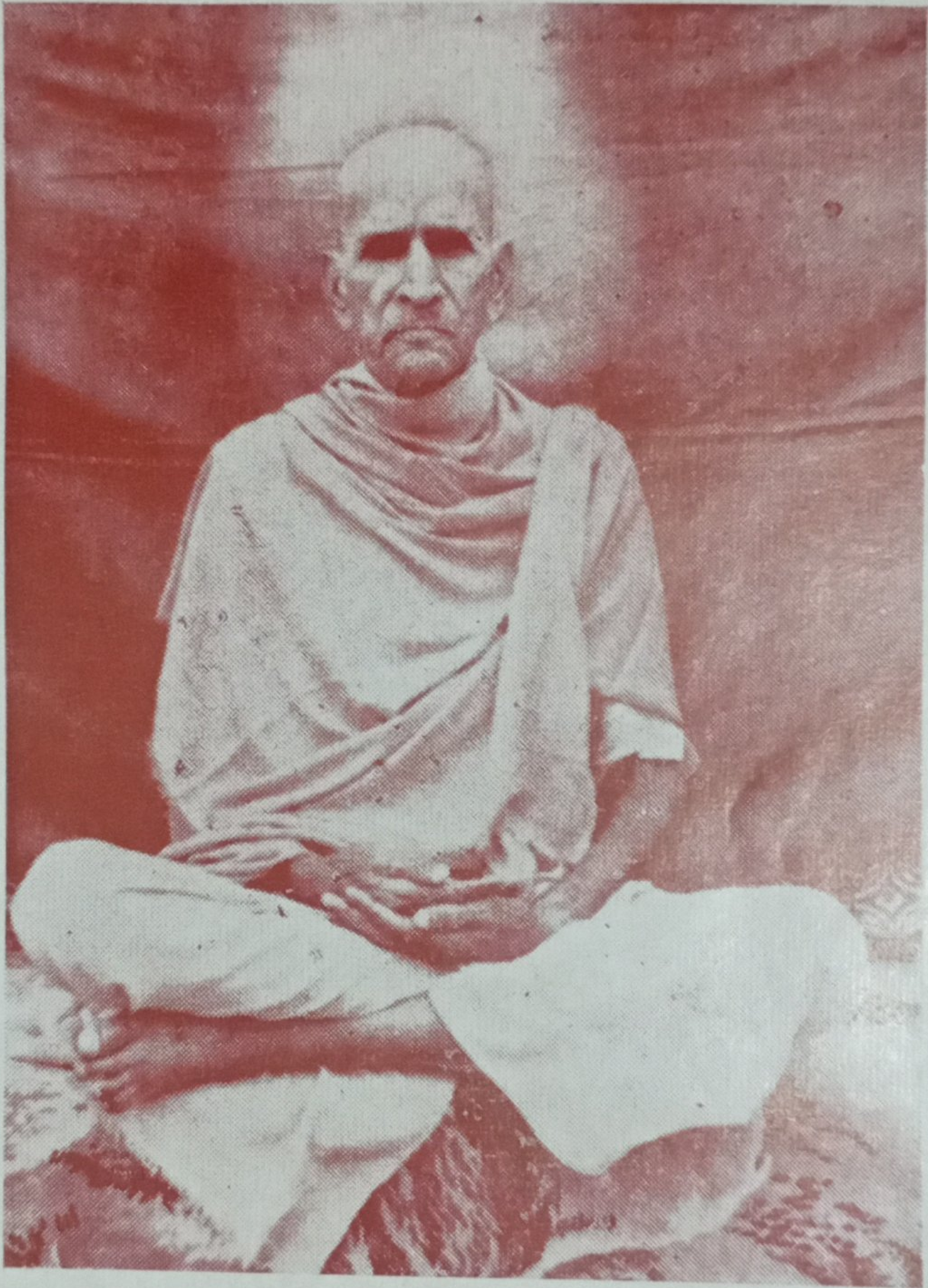
ब्रह्मलीन श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ महात्मा श्री श्री १००८
श्री बचनरामजी महाराज
आश्रम मु. पो. मींढा जिला नागौर (राजस्थान)

प्रस्तावना

परम श्रद्धेय श्री स्वामी नित्यानन्दजी महाराज ने अपनी साधना के विभिन्न सोपानों पर हम जिज्ञासुओं के लिये सद्गुरु श्री वचनरामजी महाराज का जीवन चरित्र, गुरु पूर्णिमा गीता, गुरु वचनाम्रत प्रकाश, गुरु वचन ज्ञान कुँजी, गुरु वचनोपदेश आदि ग्रन्थों की रचना कर हमको वर्णाश्रम धर्मों के आचरण के पालन करने के उपदेश दिये हैं। सौभाग्यशाली पाठकों ने अवश्य ही आचरण शुद्धि कर अध्यात्म की ओर प्रगति की है।

प्रस्तुत ग्रन्थ "ब्रह्माभ्यास" स्वामीजी महाराज की साधना की परिपक्कता का द्योतक है। ज्ञान ध्यान के समस्त पद-पदार्थों के जान लेने के बाद लक्ष्य की प्राप्ति के लिये नित्य निरन्तर अभ्यास किये बिना पांडित्य ही प्राप्त कर सकते हैं—

आत्मोत्थान एवं स्वरूप बोध नहीं तो लिजिए हमारे लिये यह कृपा प्रसाद "ब्रह्माभ्यास" स्वामी जी महाराज ने बख्शीश किया है। ग्रन्थ नित्य पठनीय है। स्नान आदि कर आसन लगाकर "ब्रह्माभ्यास" का नित्य पाठ करें।

"ब्रह्माभ्यास" की इतनी सारी सामग्री इतनी सरलता के साथ स्वामी जी महाराज ने इस ग्रन्थ में संकलित कर हम जिज्ञासुओं का बड़ा उपकार किया है। ऐसे उपकारी संत शिरोमणि को शत शत प्रधाम।

मूल चन्द बर्वा
एम.ए.,बी.कॉम. विशारद
सेवानिवृत प्रधानाध्यापक
म० पो० कुली (सीकर)

दो शब्द

'ओम्'

परम आदरणीय गुरु देव स्वामी जी श्री नित्यानन्द जी महाराज द्वारा नवीन रचित पुस्तक "श्री सद्गुरु वचन ब्रह्माभ्यास" उनके जिज्ञासु भक्तजनों के लिये अति अनुपम ज्ञान पुष्प है।

स्वामी जी महाराज श्री ने अनेक प्राचीन ग्रन्थों के उद्धारणों द्वारा गुरु शिष्य प्रश्नोत्तर प्रणाली के माध्यम से ज्ञान के गूढ रहस्य मय तत्वों को भक्तजनों को समझाने का स्तुत्य प्रयास किया है, जो आपकी महान कृपा है।

आशा है भक्तजन पुस्तक का निरन्तर अध्यन कर 'ब्रह्माभ्यास' को अपने जीवन में उतार कर एवं समझ कर इस संसार सागर के जंजाल से निकल सकेंगे।

गुरु महाराज को शत शत नमन।

भवदीय

कुशल सिंह नाथावत

एम.ए.,बी.एड.

व्याख्याता इतिहास

रा.सी.उ.मा.वि. खाचरियावास (सीकर)

आत्म निवेदन

।। ॐ श्री सद्‌गुरु परमात्मनेनमः ।।

परम श्रद्धेय श्री गुरुदेव श्री १०८ श्री स्वामी जी नित्यानन्द जी महाराज की अतिशय अनुकम्पा से मुझे आपकी सत्संग में आने व स्व स्वरूप एवम् निजात्मा के विविध उदाहरणों से प्रमाणित प्रवचन सुनकर हृदयंगम करने का सुअवसर प्राप्त हो रहा है। मैं आपका अत्यन्त कृतज्ञ हूँ।

आपने सत्संगी भक्तजनों को अधिकाधिक ज्ञान, स्व स्वरूप, आत्मज्ञान व ब्रह्मज्ञान कराने हेतु अथक प्रयास से वेद, शास्त्र, पुराण, उपनिषद, गीता, भागवत, रामायण आदि विभिन्न ग्रन्थों से एकत्रित उदाहरण, श्लोक एवं भाषा टीका सहित प्रस्तुत पुस्तक "श्री सद्‌गुरु वचन ब्रह्माभ्यास" प्रकाशित किया है। इस पुस्तक को पढ़कर मैं आनन्द विभोर हो गया।

सभी भक्तजनों को प्रस्तुत संग्रह 'ब्रह्माभ्यास' का प्रति दिन अभ्यास करने से "शरीर नाशवान है, आत्मा अमर है" "ब्रह्म एक है" पर पूर्ण विश्वास हो जायेगा ।

आपका चरण रज सेवक
द्वारका प्रसाद बिरला
म० पो० रेनवाल
जिला जयपुर (राज०)

॥ ॐ श्री गुरु परमात्मने नमः ॥

द्रव्य दाता का परिचय

परमभक्त सद्‌गुण सम्पन्न श्री अन्नीलाल जी खोवाल, श्री मुक्तिलाल जी खोवाल ग्राम सीसू (राणोली) जिला सोकर (राज.) इनके परिवार के सभी सदस्यगण बड़े श्रद्धालु भगवत-प्रेमी तथा संतसेवी परोपकारी हैं। ये अकोला महाराष्ट्र में रहकर मजदूरी (हमाली का काम) करते हैं। इस पुस्तक के प्रकाशन में इन्ही की उदारता का फल है यह पुस्तक छपकर पाठकों के हाथ में है। आनन्द मङ्गलमय श्री सद्‌गुरुदेव भगवान के चरणों में प्रार्थना है कि वे इन्हें आनन्द मङ्गल प्रदान करें।

स्वामी नित्यानन्द

समय का दान

श्रीमान ठाकुर साहब सोहनसिंह जी राठौड ग्राम चाँवण्डिया जिला नागौर (राज.) आप बड़े श्रद्धालु भक्त ईश्वर प्रेमी संत सेवी सद्‌गुण सम्पन्न है। आपने अपना अमूल्य समय का दान किया है और इस पुस्तक के छपते समय प्रूफ निरक्षण का पूरा ध्यान दिया है आप को धन्यवाद देता हूँ और आनन्द मङ्गलमय सद्‌गुरुदेव भगवान इनका कल्याण करें।

स्वामी नित्यानन्द

सहयोग

सौ० श्रीमति गीता देवी जाखोटिया B-13-H शीव मार्ग बनीपार्क, जयपुर निवासी ने पुस्तक छपते समय आना और पुस्तक छपने पर पुस्तकें प्रेस से दिवराला पहुँचाना आदि सभी प्रकार से सहयोग दिया है आनन्द मङ्गलमय श्री सद्‌गुरु भगवान इनका कल्याण करे।

स्वामी नित्यानन्द

महात्मा श्री वचनरामजी महाराज के
अधिकारी शिष्य
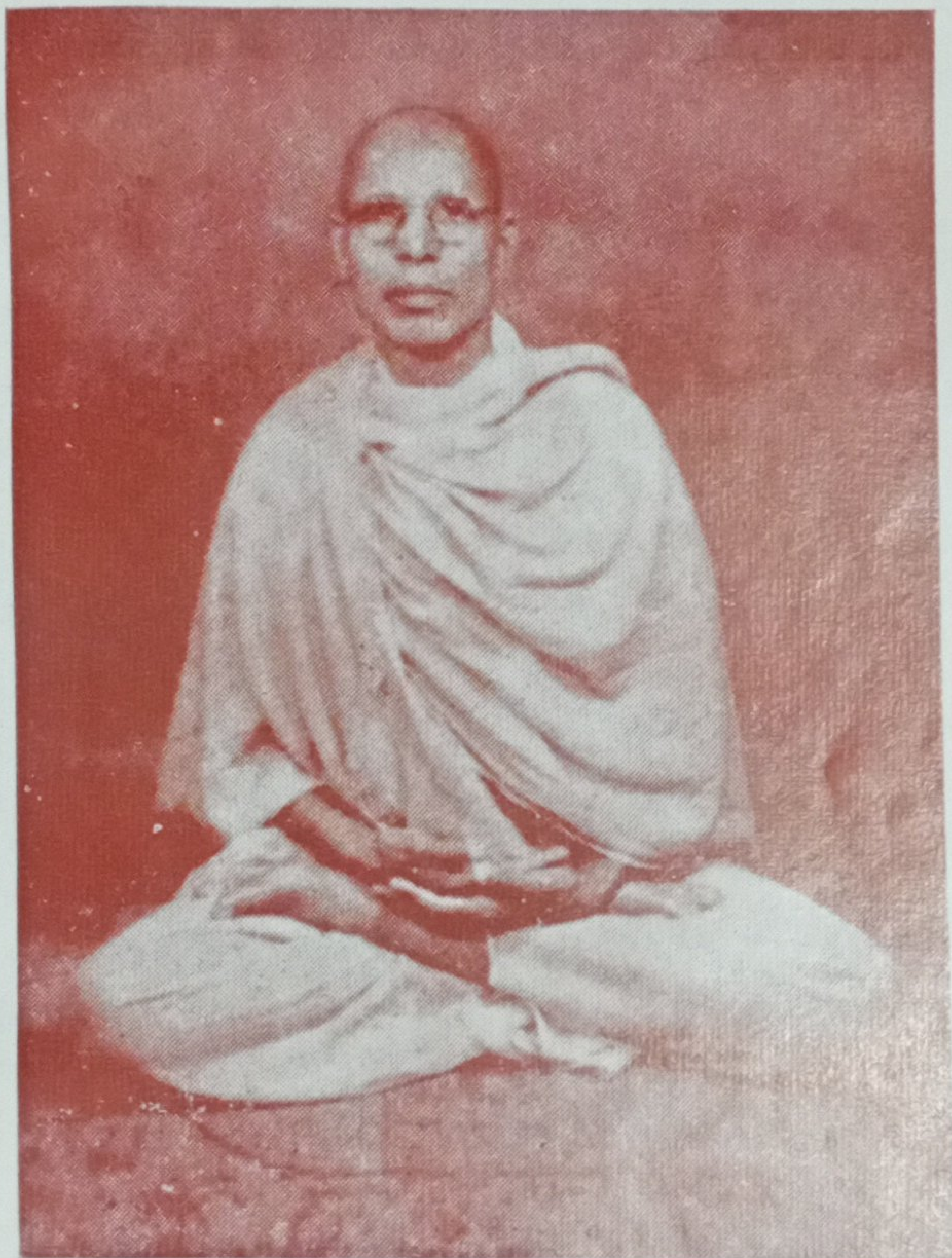
श्री १०८ श्री स्वामी नित्यानन्द जी महाराज
मु० पो० दिवराला वाया श्री माधोपुर
जिला सीकर (रा०) पिन ३३२७०४

।। ॐ श्रीसद्गुरु परमात्मनेनमः ।।

* शिवोऽहम् *

श्री सद्गुरु वचन ब्रह्माभ्यास

• मंगलाचरण •

—।। श्लोक ।।—

चित्सदानन्द रूपाय सर्वधी वृत्ति साक्षीणे ।

नमो वेदान्त वेद्याय ब्रह्मणेऽनन्त रूपिणे ।।

गुरु ब्रह्मा गुरुविष्णु गुरुर्देवो महेश्वरः ।

गुरु साक्षात्परंब्रह्म तस्मै श्री गुर वे नमः ।।

॥ दोहा ॥

अविनाशी अविगत अचल, अगम अतुल अविकार ।
अखण्ड अनादि अलख अज, अमल अद्वैत अपार ॥१॥

सर्वाधार अधिष्ठान जग, सच्चिदानन्द स्वरूप ।
अक्षय निर्मल निर्विकार, सद्गुरु आप अनूप ॥२॥

वचनराम सद्गुरु सदा, इष्टदेव मम खास ।
नित्यानन्द पद कमल नमन, शुद्ध मति भ्रम तम नास ॥३॥

ब्रह्माभ्यास लघु ग्रंथ लिखू, निज मति के अनुसार ।
नित्यानन्द पढ़ उर धरत, होवत ब्रह्म विचार ॥४॥

एक जिज्ञासु निस्काम शुभ कर्म उपासना के द्वारा अपना अंतःकरण के मल (पाप) विक्षेप (मन की चंचलता) आदि दोष हटाकर संसार को निस्सार समझकर वैराग्य युक्त शान्त चित्त—इन्द्रियाँ को जीते हुये श्रद्धापूर्ण विषयों से उपराम होकर शीत—उष्ण आदि सहन करता हुआ सद्गुरु की खोज में निकला आगे चल कर एक वन में नदी के किनारे पर एक सुन्दर आश्रम दिखाई पड़ा, वह जिज्ञासु अन्दर चला गया, एक वृक्ष के नीचे सिद्धासन लगाये ब्रह्माकार

वृत्ति में बैठे हुये श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ महात्मा का दर्शन किया, श्रौर साष्टाँग डंडवत प्रणाम करके दोनों हाथ जोड़कर नम्रता पूर्वक पूछने लगा।

शिष्य : हे भगवन मैने इस संसार में ग्रनेकों बार जन्म मृत्यु को प्राप्त होकर बहुत कष्ट उठाया है, श्रौर कर्म उपासना—ग्रादि भी बहुत किया है लेकिन ग्रभी तक मुझे शान्ति नहीं मिली है, ग्रब ग्राप कृपा करके मुझको वही उपाय बताइये जिससे सभी प्रकार के दुखों से छूटकर सच्चिदानंद परमात्मा का दर्शन करके परम सुख को प्राप्त कर सकूँ।

सद्गुरु : हे शिष्य ! तूने पहिले ग्रपने को नहीं जाना कि मैं भगवान को खोजने वाला कौन हूँ ? क्योंकि जैसे कहीं पत्र भेजना है तो पत्र पाने वाले का नाम, पता तथा भेजने वाले का पता, दोनों का पता होना ग्रावश्यक है। नहीं तो पत्र न जाने कहाँ जाये ? तैसे—परमात्मा की प्राप्ति करने वाले का पता तथा परमात्मा का पता दोनों का पता (जानकारी) ग्रावश्यक है। ग्रतः पहिले ग्रपना पता लगाग्रो ग्रौर पीछे परमात्मा का पता लग जायगा। पहिले मनुष्य को ग्रपने घर की बात जाननी चाहिये पीछे दूसरे की।

शिष्य : मैं तो साधारण मनुष्य हूँ ग्रमुक मेरा नाम है, ग्रमुक मेरी जाति है, ग्रमुक घर ग्रमुक गांव है, मैं तो ग्रपने को इतना ही जानता हूँ।

सद्गुरु : जब शमशान में तुम्हारा शरीर जल जायेगा तब मनुष्य-पना कहाँ जायेगा ? नाम जाति घर ग्राम का अभिमान कहाँ जायेगा ? विचार कर देखो। जब बालक जन्मता है तब कोई नाम नहीं होता, माता पिता बाद में नाम का आरोप करते हैं। तब पुरुष मानता है कि अमुक नाम वाला एडी से चोटी तक कुल यह पुतला ही मैं हूँ, लेकिन यह दावा तो झूठा है। झूठा दावा जब से कीना। लगा तभी से मरना जीना। झूंठे को तूं कितना सत्य मानता है।

शिष्य : हे भगवन् यह बात तो समझ में आगई कि चार दिन की चाँदनी फिर अंधियारी रात है। मरने पर तो दावा झूंठा ही हो जाता है। अब आप ही बताइये कि मैं कौन हूँ ? मेरी समझ में नहीं आता है मैं आपकी शरण हूँ। मुझे मेरा स्वरूप बताइये कि शरीर के छूटने के पश्चात् मैं किस रूप में रहूँगा ?

सद्गुरु : देखो ! जिस चीज पर मेरा मेरा कह कर दावा किया—जाता है उस चीज से मेरा कहने वाला न्यारा ही रहता है जैसे तूं कहता है, मेरा घर मेरा ग्राम मेरे पशु मेरा खेत मेरी दुकान मेरा बगीचा आदि तो क्या तूँ मेरा कहने वाला इन वस्तुओं में सामिल है ? क्या तूँ वह वस्तु स्वरूप है ? नहीं नहीं प्यारे ! तूँ उन वस्तुओं से मेरा मेरा कहने वाला अलग ही है। इसी प्रकार तूं इस शरीर के सम्बन्धियों में मेरा पुत्र, मेरी स्त्री, मेरा पिता, मेरी

माता इत्यादि कहता है तो क्या तूँ पुत्र, स्त्री, पिता, माता रूप है ? नहीं नहीं उनसे भी मेरा कहने वाला भिन्न ही है। तैसे ही शरीर के वस्त्राभूषणों में मेरा कोट मेरा कमीज मेरी टोपी मेरी धोती मेरी घड़ी मेरा पैन इत्यादि कहता है तो क्या तूँ कोट कमीज टोपी धोती घड़ी पैन रूप हैं ? नहीं नहीं प्यारे ! तूँ उनसे भी मेरा मेरा कहने वाला भिन्न है। तैसे शरीर के अंगों में भी मेरे हाथ मेरे पैर मेरा सिर मेरी आँख मेरा कान मेरा नाक मेरा मुँह मेरा पेट मेरा हृदय मेरा श्वास मेरा मन मेरी बुद्धि मेरा शरीर आदि मेरा मेरा कह कर दावा करता है इससे मालुम होता है कि मेरा मेरा कहने वाला तूँ यह कोई वस्तु नहीं। अज्ञान दशा में भी (मेरा मेरा कहने वाला) अपनी सफाई देता है कि मैं मम-कथित वस्तुओं में सामिल नहीं हूँ—इनसे न्यारा हूँ। लेकिन सफाई देते हुये भी अपने को नही समझता। मेरा कहने वाला मेरा मेरी कह कर सम्बोधित वस्तुओं से अलग ही रहता है, यह लोक में न्याय है। इससे शरीर इन्द्रिय प्राण अंतःकरण रूप संघात तूँ नहीं है और यह तेरा नहीं है। तूँ तो इस संघात का जानने वाला साक्षी चेतन आत्मा है।

शिष्य : भगवन् तो यह देह किसका है ?

सद्गुरु : पंचभूतों का है ।

शिष्य : भगवन् पंच भूत कौन से हैं ?

सद्गुरु : आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी, यह पंच भूत हैं ।

शिष्य : भगवन् इनकी पहिचान क्या है अर्थात् कैसे जाना जाय कि यह देह पंच भूतों से रचित है ? इनका प्रमाण बताइये ?

सद्गुरु : अवश्य प्रमाण बतायेंगे "रामायण"

छिति जल पावक गगन समीरा ।
पंच रचित यह अधम शरीरा ।।

इस संघात में स्थूल सूक्ष्म कारण ऐसे तीन शरीर हैं ।

शिष्य : भगवन् स्थूल शरीर किसे कहते हैं ?

सद्गुरु : पंच महाभूतों के तमोगुण अंश से उत्पन्न हुये पच्चीस तत्वों का यह स्थूल शरीर बना है जिन्हें पंचीकरण कहते हैं जिनको कोष्टक के द्वारा समझाते हैं ।

॥ कोष्टक ॥

पंच महा भूतों के नाम	आकाश	वायु	अग्नि	जल	पृथ्वी
आकाश	शोक	काम	क्रोध	मोह	भय
वायु	पसारन	धावन	बलन	चलन	आंकुचन
अग्नि	निन्द्रा	तृषा	क्षुधा	कांति	आलस्य
जल	लार	श्वेद	मूत्र	वीर्य	रक्त
पृथ्वी	रोम	त्वचा	नाड़ी	मांस	अस्थि

इन २५ तत्वों का यह स्थूल शरीर है। इस स्थूल शरीर को ही अन्नमय कोश कहते हैं।

शिष्य : भगवन् इसे अन्नमय कोश क्यों कहते हैं ?

सद्गुरु : प्रथम अन्न की उत्पत्ति पृथ्वी से होती है। फिर माता पिता के अन्न खाने से रज वीर्य बना, रज वीर्य से शरीर बना, फिर माता के अन्न खाने से गर्भ में नाल के द्वारा बच्चा का पोषण होता है, जन्म होने पर माता के अन्न

खाने से दूध उत्पन्न होता है, दूध का पान कर बच्चा बड़ा होता है, और स्वयं अन्न खाकर जवान वृद्ध होकर अन्त में अन्नमय पृथ्वी में ही समाप्त हो जाता है। और यह आत्मा को कोश की तरह ढाँकता है। इससे इसको अन्नमय कोश कहते हैं। अपने स्वरूप को न जानकर इस पुतले में अहंभाव करके शरीर के जन्मने से मैं जन्मता हूँ, बालक होने से मैं बालक हूँ, जवान होने से मैं जवान हूँ, शरीर के वृद्ध होने से मैं वृद्ध हूँ, शरीर के बिमार होने से मैं बिमार हूँ, शरीर के मरने से मैं मरता हूँ, इत्यादि देह के धर्मों को अपने में मानता है, इससे सुखी दुःखी होता है। विचार करके देखें तो यह झूंठा दावा है। हे शिष्य तू झूंठा दावा छोड़कर अपने शुद्ध स्वरूप का सच्चा दावाकर कि मैं शरीर नहीं, शरीर मेरा नहीं, शरीर पंच भूतों का है, मैं निराकार चेतन आत्मा, इसको जानने वाला, द्रष्टा घट द्रष्टा की तरह, इनसे न्यारा हूँ।

शिष्य : भगवन् सूक्ष्म शरीर किसे कहते हैं ?

सद्गुरु : सत्तरह तत्त्वों के समुदाय को सूक्ष्म शरीर कहते हैं।

शिष्य : भगवन् सत्तरह तत्त्व कौन से हैं ?

सद्गुरु : पंचज्ञान इन्द्रियाँ, पंचकर्म इन्द्रियाँ, पंच प्राण, मन, बुद्धि, यह १७ तत्त्व है। इनके देवता व विषय भी अलग अलग है।

शिष्य : पंचज्ञान इन्द्रियाँ कौनसी हैं और इन्हें ज्ञान इन्द्रियाँ क्यों कहते हैं ? और इनकी उत्पति कहाँ से है ? और इनके

देवता व विषय कौन-कौन से हैं कृपा करके भिन्न-भिन्न बतलाइये ?

सद्‌गुरु : यह पंचज्ञान इन्द्रियाँ पंच भूतों के सतोगुण अंश से बनी है। और सतोगुण ही ज्ञानशक्ति वाला। अतः इससे ज्ञान होता है इसलिये इन्हें ज्ञान इन्द्रियाँ कहते हैं अब इनको कोष्टक द्वारा बताते हैं।

॥ कोष्टक ॥

कारण	कार्य इन्द्रियां	विषय	देवता
आकाश के सत्वगुण से	श्रोत्र	शब्द सुनना	दिशा
वायु के सत्वगुण से	त्वचा	स्पर्श करना	वायु
अग्नि के सत्वगुण से	चक्षु	रूप देखना	सूर्य
जल के सत्वगुण से।	रसना	रस लेना	वरुण
पृथ्वी के सत्वगुण से	घ्राण	गंध सूंघना	अश्विनी कुमार

शिष्य : भगवन् मन बुद्धि की उत्पति कैसे हुई ?

सद्गुरु : पंच भूतों का सतोगुण मिलकर मनबुद्धि रूप अंतःकरण बना है।

शिष्य : भगवन् इनको अंतःकरण क्यों कहते हैं ?

सद्गुरु : इनसे अन्दर का ज्ञान होता है, इससे इन्हें अन्तःकरण कहते हैं। यह चार वृत्तियाँ हैं, मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार। जहाँ सूक्ष्म शरीर में १७ तत्व मानते हैं, तहाँ मनके अन्तर्गत चित्त को बुद्धि के अन्तर्गत अहंकार को लेलेते हैं। इन चारों के विषय और देवता न्यारे न्यारे हैं।

शिष्य : भगवन् इन चारों के विषय और देवता भी समझाइये।

सद्गुरु : इनको संक्षेप से कोष्टक द्वारा समझाता हूँ।

इन्द्रिय	विषय	देवता
मन	संकल्प विकल्प	चन्द्रमा
बुद्धि	निश्चय करना	ब्रह्मा
चित्त	चिंतन करना	वासुदेव
अहंकार	अहंता करना	रूद्र

इस अन्तःकरण के धर्म सुख दुखादि है। जीवात्मा अपने को भूलकर इसमें अहंभाव करके, मैं सुखी हूँ, मैं दुखी हूँ, ऐसा मानता है, लेकिन यह तो झूठा ही कहना है। क्योंकि यह ज्ञान इन्द्रियाँ, और अन्तःकरण पंचभूतों के हैं, आत्मा में नहीं। इससे हे शिष्य, यह मन बुद्धि तुझे नहीं जानते, क्योंकि जड़ है और तू इनको जानने वाला साक्षी चैतन्य आत्मा दृष्टा, घट दृष्टा की तरह इनसे न्यारा है।

पूर्वोक्त ज्ञान इन्द्रियाँ के साथ में मन के लग जाने से देखने के सुनने के इत्यादि संकल्प विकल्प होते हैं और तमाम मनोमय प्रपंच बनकर तैयार हो जाता है। यह ज्ञान इन्द्रियाँ और मन आत्मा को कोश की तरह ढाँकते हैं। इससे इन्हें मनोमय कोश कहते हैं।

इन्हीं ज्ञान इन्द्रियों के साथ बुद्धि के होने से मैं कर्त्ता हूँ मैं भोक्ता हूँ इत्यादि अहंभाव का निश्चय होता है। इससे इन्हें विज्ञान मय कोश कहते हैं।

पाँच ज्ञान इन्द्रियाँ और मनोमय कोश व विज्ञानमय कोश तूँ नहीं, और यह तेरे नहीं, यह पंच भूतात्मक है, और जड़ है, दृश्य है, तूं इनको जानने वाला, साक्षी चैतन्य आत्मा, दृष्टा, घट दृष्टा की तरह इनसे न्यारा है ऐसा अपने को निश्चय कर।

शिष्य : हे गुरुदेव अब कृपा करके पाँचों कर्म इन्द्रियाँ भी भिन्न-भिन्न समझावें ?

सद्गुरु : यह कर्म इन्द्रियाँ पाँचों भूतों के रजोगुण के अंश से बनी है, इनसे कार्य होता है इसलिये इन्हें कर्म इन्द्रियाँ कहते हैं। इन्हें भिन्न-भिन्न बताते हैं कोष्टक से।

कारण	कार्य इन्द्रियाँ	बिषय	देवता
आकाश के रजोगुण से	वाक्	बोलना	अग्नि
वायु के रजोगुण से	पाणि	लेनदेन करना	इन्द्र
अग्नि के रजोगुण से	पाद	चलना फिरना	वामन
जल के रजोगुण से	उपस्थ	मूत्र त्याग	प्रजापति
पृथ्वी के रजोगुण से	गुदा	मल त्याग	यम

यह पंच कर्म इन्द्रियाँ पंच भूतों के रजोगुण अंश से बनी है और पाँचों भूतों के रजोगुण अंश मिलकर पंच प्राणादि वायु बने हैं जिनके स्थान व क्रिया न्यारी है।

शिष्य : पंच प्राणादि वायु कौन-कौन हैं और इनके स्थान क्रिया समझावें ?

सद्गुरु : हे शिष्य मैं पंच प्राणादि वायु को संक्षेप में कोष्टक द्वारा बताता हूँ।

पंचवायु	स्थान	क्रिया
प्राण	हृदय स्थान	रात दिन मैं २१६०० श्वास लेना
अपान	गुदा ,,	गंदी वायु तथा मल को बाहर निकालना ।
समान	नाभि ,,	खाये पीये अन्न जल को पचाकर ७२७२१०२०१ शरीर की सभी नाड़ीयों में रस पहुंचाना ।
उदान	कंठ ,,	खाये पीये अन्न जल का विभाग करना व स्वप्न की रचना करना ।
व्यान	सर्वाङ्ग	सभी शरीर में संधीयों को मोड़ना ।

यह पंच प्राण और पंच कर्म इन्द्रियाँ मिलकर प्राणमय कोश कहलाता है। इनसे क्रिया होती है, क्योंकि रजोगुण से रचित है, और रजोगुण में ही क्रिया शक्ति है। यह प्राणमय कोश तूं नहीं और यह तेरा नहीं यह पंच भूतों के रजोगुण से रचित है जड़ है तेरा दृश्य है विनाशी है। तूं इस प्राणमय कोश को जानने वाला साक्षी चैतन्य आत्मा दृष्टा घट दृष्टा की तरह इनसे न्यारा है, ऐसा अपने को निश्चय कर। इस प्रकार यह सतरह तत्त्वों का सूक्ष्म शरीर है इनके अंतर्गत तीन कोश है जो पूर्व कह चुके है।

शिष्य : भगवन् इन १७ तत्त्वों के समुदाय को सूक्ष्म शरीर क्यों कहते हैं ?

सद्गुरु : स्थूल शरीर की अपेक्षा से यह १७ तत्त्व सूक्ष्म हैं। क्योंकि स्थूल शरीर दृष्टिगोचर होता है। १७ तत्त्व दृष्टिगोचर नहीं होते हैं इससे १७ तत्वों के समुदाय को सूक्ष्म होने से सूक्ष्म शरीर कहते हैं। यह सूक्ष्म शरीर तू नहीं, यह तेरा नहीं, यह पंच भूतों का है जड़ है तेरा दृश्य है तूं इनको जानने वाला साक्षी चैतन्य आत्मा दृष्टा घट दृष्टा की तरह इनसे न्यारा है ऐसा अपने को जान।

शिष्य : भगवन् कारण शरीर किसे कहते हैं ?

सद्गुरु : कारण वह कहलाता है जिससे कार्य की उत्पत्ति होती है, यहाँ स्थूल और सूक्ष्म दोनों शरीरों की उत्त्पत्ति में अज्ञान ही कारण है, इससे अज्ञान को ही कारण शरीर कहते हैं। यह अज्ञान सुषुप्ति अवस्था में रहता है, और इसी को आनन्दमय कोश कहते हैं। क्योंकि मनुष्य जाग कर कहता है कि मैं आज ऐसा सुख से सोया कि "मैंने कुछ न जाना" यह 'कुछ न जानना' ही अज्ञान है, और जो आनन्द है वह विषय का नहीं है, अपने स्वरूप का ही है। जाग्रत अवस्था में मैं यह नहीं जानता हूँ मैं वह नहीं जानता हूँ—ऐसा अज्ञान होता है। पर इस जानने और न जानने का अनुभव करने वाला तूँ ही तो है। यह कारण शरीर तू नहीं यह तेरा नहीं यह अज्ञान का है जड़ है तेरा दृश्य है और तू इस कारण शरीर का

जानने वाला साक्षी चेतन्य ग्रात्मा दृष्टा घट दृष्टा की तरह न्यारा है ऐसा निश्चय कर ।

शिष्य : भगवन् तीन ग्रवस्था कौनसी है ?

सद्गुरु : जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति, ये तीन ग्रवस्था हैं ।

शिष्य : जाग्रत ग्रवस्था किसे कहते हैं ।

सद्गुरु : जहाँ दश बाह्यकरण (भोग की साधन इन्द्रियाँ) ग्रौर चार ग्रन्तःकरण (ग्रन्दर भोग के साधन) ऐसी चौदह इन्द्रियाँ तथा इन्द्रियाँ के देवता व चौदह इन्द्रियां के विषय कुल बैंयालीस तत्वों का व्यवहार होता है ऐसी चौदह त्रिपुटियाँ वाली तथा स्पष्ट प्रतीति वाली जाग्रत ग्रवस्था है ।

यह जाग्रत ग्रवस्था स्थूल शरीर की है, इस ग्रवस्था में जीव का वासा नेत्रों में हैं, वेखरी वाणी है, स्थूल भोग है, क्रिया शक्ति है, रजोगुण है, इस ग्रवस्था का ग्रभिमानी जोव का विश्व नाम है ।

तूं इस ग्रवस्था में चौदह त्रिपुटियाँ पूर्ण होवे उसे भी जानता है, पूर्ण न होवे उसे भी जानता है, ग्रतः यह जाग्रत ग्रवस्था तूँ नहीं, यह तेरी नहीं, यह स्थूल शरीर की है, तूँ इस ग्रवस्था को जानने वाला, दृष्टा, घट दृष्टा की तरह, सदा इससे ग्रलग है, ऐसा निश्चय कर ।

शिष्य : भगवन् स्वप्न ग्रवस्था किसे कहते हैं ?

सद्गुरु : जाग्रत अवस्था में जो अन्तःकरण रूप कैमरे के द्वारा शब्द, स्पर्स, रूप, रस, गंध, इन पंच विषयों के संस्कार रूप चित्र खींचे जाते हैं, निन्द्राकाल में उन्हीं संस्कारों से हिता नाम की नाड़ी के अन्दर कंठदेश में जो सृष्टि सिनेमा की भाँति प्रतीत होती है, उसी को स्वप्न अवस्था कहते हैं। यह स्वप्न अवस्था सूक्ष्म शरीर की है, इस अवस्था में जीवका वासा कंठ में है मध्यमा वाणी हैं, सूक्ष्म वासनामय भोग है, ज्ञान शक्ति है सतोगुण है इस अवथा के अभिमानी जीव का तेजस नाम है तथा यह अवस्था अस्पृष्ट प्रतीति वाली है, तूं चैतन्य आत्मा इस अवस्था का भी "आज मैने अमुक स्वप्न देखा" इस प्रकार साक्षी है, अतः इसका जानने वाला तू सदा प्रथक है। ऐसा निश्चय कर।

शिष्य : भगवान् सुषुप्ति अवस्था किसे कहते हैं ?

सद्गुरु : चिदाभास सहित बुद्धि जाग्रत तथा स्वप्न के संस्कारों को लेकर जिस समय अज्ञान में विलीन होती है, ऐसी जो बुद्धि की विलय अवस्था है, उसी को सुषुप्ति कहते हैं। यह अवस्था कारण शरीर की है। इस अवस्था में जीव का हृदय स्थान है, पश्यन्ति वाणी है, आनन्द भोग है, द्रव्य शक्ति है, तमोगुण है, इस अवस्था का अभिमानी जीव का प्राज्ञ नाम है, तूँ चैतन्य आत्मा सुषुप्ति को जानने वाला द्रष्टा घट द्रष्टा की तरह अलग है। ऐसा अपने को जान।

शिष्य : भगवन् ! आपके उपदेशामृत पान कर मैं समझ गया कि मैं जानने वाला हूँ किन्तु मुझ जानने वाले का रंग रूप क्या है कृपा कर कहिये ?

सद्गुरु : रंग रूप शरीर के हैं तुझ जानने वाले आत्मा केनहीं है तूँ तो स्वयं सच्चिदानन्द स्वरूप है, और यह शरीर जड़ है दुख रूप असत् (विनाशी) है।

शिष्य : भगवन् सच्चिदानन्द का अर्थ समझाइये और असत् जड़ दुख का भी अर्थ समझाइये ?

सद्गुरु : जो तीन काल (भूत, भविष्य, वर्तमान) में बदलता न हो सो सत् है। और जो क्षण-क्षण में बदलता हो वह असत् है। तूं आत्मा तीनों काल में एकसा है। इससे सत् है, और शरीर क्षण-क्षण में बदलता है, इससे असत् है। जो अपने को जाने और दूसरे को जाने सोई चित् (चेतन) कहलाता है। और जो अपने को न जाने और दूसरे को जाने वह जड़ कहलाता है। तूं आत्मा तीनों काल में एक रस होकर अपने को और अपने से भिन्न पदार्थों को जानता है, इससे तूं ही चेतन है, और यह शरीर न अपने को जाने न दूसरे को जानता है इससे जड़ है। तूं आत्मा ही तीनों काल में प्रिय होने से आनन्द रूप है, और यह देह दुख रूप है।

सत्-चित् आनन्द, इन तीन शब्दों से सच्चिदानन्द शब्द बनता है। इससे तेरा स्वरूप सच्चिदानन्द है।

शिष्य : भगवन् मैं समझ गया कि मैं सच्चिदानन्द स्वरूप आत्मा हूँ। शरीर नहीं हूँ लेकिन अब बताइये कि परमात्मा कहाँ मिलेगें ?

सद्गुरु : परमात्मा को एकदेशी मानते हैं या सर्व देशी ?

शिष्य : एकदेशी मानने से क्या आपत्ति है और सर्व देशी मानने में क्या आपत्ति है ?

सद्गुरु : अगर एकदेशी मानता है तो अनात्मा होने से भगवान भी विनाशी हो जायेंगें, क्योंकि एक देशी वस्तु संसार में विनाशी देखी जाती है, और सर्वदेशी मानने में कोई आपत्ति नहीं है क्योंकि गीता / १८/६१. में कहा है कि "ईश्वर सर्व भूतानां हृद्देशेऽजुन तिष्ठति । (रामायण) व्यापक ब्रह्म एक अविनाशी । सत चेतन घन आनन्द राशी ।। और श्रुति में भी परमात्मा सर्व व्यापक बताया है । "एको देवः सर्व भूतेषु गुढ़ः सर्व व्यापी सर्व भूतान्तरात्मा ।।अर्थ।। एक ही परमात्मा देव सर्व भूतों के अन्दर छिपा हुआ है सर्व व्यापी तथा सर्व भूत प्राणियों का अन्तरात्मा है ? और प्रह्लाद ने भी कहा है "तोमे मोमे खड़ग-खंभ में पूर रहा जगदीश" ऐसे सर्व व्यापकता के बहुत से प्रमाण हैं यदि एकदेशी मानोगे तो यह सब प्रमाण अप्रमाण हो जायेगें इससे परमात्मा सर्व देशी ही है और सब भूतों के अन्दर है ।

शिष्य : भगवन् अगर परमात्मा सर्व देशी है तो इस शरीर के अन्दर भी होना चाहिये ?

सद्‌गुरु : अवश्य है। भगवान का स्वरूप रामायण में "राम सच्चिदानन्द दिनेशा" बताया है। इससे जो सच्चिदानन्द स्वरूप है वही परमात्मा है।

शिष्य : गुरुदेव ! सच्चिदानन्द आत्मा तो मैं ही हूँ।

सद्‌गुरु : तो बस, तूं सच्चिदानन्द आत्मा ही तो परमात्मा है लेकिन अपने को भूलकर देह में अहं भाव करने से छोटा सा जीव बन बैठा है। अपना शुद्ध स्वरूप जान लेने से तूं ही सबसे मोटा सर्व व्यापी ब्रह्म सच्चिदानन्द धन परमात्मा है।

शिष्य : भगवन् कोई प्रमाण बताइये ?

सद्‌गुरु : हे शिष्य सामवेद का महावाक्य "तत्त्वमसि" ।। रामायण ।। सो तूं तोहि ताहि नहीं भेदा ।। और श्रुति प्रमाण,

यत्परं ब्रह्म सर्वात्मा विश्वस्यायतनं महत ।
सूक्ष्मात्सूक्ष्मतरं नित्यं त्वमेव त्वमेनतन् ।।

जो देश काल वस्तु परिच्छेद से रहित नित्य शुद्ध मुक्त स्वरूप सर्वात्मा विश्व का परमाधार सर्वात्मा ब्रह्म है वह तू ही है। तू वही है, अर्थात् वह तुम से न्यारा नहीं है तुम उनसे न्यारा नहीं।

जाग्रतस्वप्नसुषुप्त्यादि यत्प्रपंचं प्रकाशते ।
तद् ब्रह्माहमिति ज्ञात्वासर्व बन्धैः प्रमुच्यते ।।

जो सच्चिदानन्द ब्रह्म जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति आदि प्रपंच को प्रकाशता है वह ब्रह्म मैं हूँ। ऐसा जानकर ही वह जिज्ञासु सर्व बंधनों से मुक्त हो जाता है। इससे हे शिष्य जिसको तूँ बाहर ढूंढता था वही सच्चिदानन्द धन परमात्मा तूं ही तो है। और देख,

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्ण मुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते।।

वेद कहता है कि (अदःपूर्णम्) वह परमात्मा पूर्ण है। (इदंपूर्णम्) यह जीव स्वरूप भी पूर्ण है क्योंकि (पूर्णात्पूर्ण उदस्यते) पूर्ण से पूर्ण ही पैदा होता है। (पूर्णस्य पूर्ण आदाय) पूर्ण की पूर्णता ग्रहण करने से (पूर्ण एवं अवशिष्यते) पूर्ण ही शेष रह जाता है।

श्रुति माता जिज्ञासुजनों को उपदेश देती हुई कहती है कि परोक्ष रूप से प्रतीयमान यह ईश्वर स्वरूप पूर्ण है और प्रत्क्षरूप से प्रतीयमान जीव स्वरूप भी पूर्ण है जब कि जीव पूर्ण ब्रह्म से पैदा हुआ फिर अपूर्ण क्यो ?

पूर्ण से पूर्ण ही उत्पन्न होता है क्योंकि स्वजाति से स्वजाति ही पैदा होता है।

ममैवांशो जीव लोके जीव भूतः सनातनः।। गीता १५।७। भगवान श्री कृष्ण कहते हैं हे अर्जुन इस देह में यह जीवात्मा मेरा ही सनातन अंश है।। रामायण।। ईश्वर अंश जीव अविनाशी। चेतन अमल सहज सुखराशी ।। गीता।। १३।२ ।। क्षेत्रज्ञंचापि मां विद्धि सर्व क्षेत्रेषु भारत।। हे अर्जुम तूं सब क्षेत्रों में क्षेत्रज्ञ अर्थात् जीवात्मा मेरे को ही जान।

अहमात्मा गुडाकेश सव भूताश्यस्थितः ।। गीता । १०।२०/
हे अर्जुन मैं सब भूतों के हृदय में स्थित आत्मा हूँ ।

सच्चिदानन्द रूपत्ववाद बह्मैवात्मा न संषय ।
प्रमाण कोटि संधाना दिति वेदान्त डिंडम ।।

यह आत्मा सच्चिदानन्द स्वरूप ही है इसमें करोडों ही प्रमाण है यह वेदान्त का डंका है ।

।। ब्रह्मभावना से ब्रह्मत्व ।।

हे शिष्य आदि जगद् गुरु श्री स्वामी शंकराचार्य जी महाराज ने अपरोक्षाऽनुभूति नामक ग्रंथ श्लोक १४० में बताया है ।

भावितं तीव्रवेगेन यद्वस्तु निश्चयात्मना ।
पुमांस्तद्धि भवेच्छीध्रंज्ञेयं भ्रमरकीटवत ।।१४०।।

निश्चयात्मा पुरुष की तीव्र भावना करके जो मनुष्य जिस वस्तु का चिंतन करे है शीघ्र ही भ्रमर कीट की तरह तद्रूप हो जाय है। जैसे भ्रमर कीट कीड़ा विशेष होय है वह अपने स्थान याने दीवार में मिट्टी का घर बनाता है और कीट याने हरि लट को लाकर के उसमें बन्द कर देता है और उस कीट को अपनी भ्रमर गुन्जार बारंबार सुनाता है वह कीट भय के मारे भ्रमर कीट का ध्यान करते २ तद्रूप हो जाय है। ऐसा लोक में प्रसिद्धि है इसी प्रकार पुरुष ब्रह्म विचार करता करता तद्रूप हो जाता है।

हे शिष्य तुम तो उपरोक्त सभी प्रमाणों करके सच्चिदानन्द स्वरूप ही हो सभी श्रुति स्मृति वेद पुराण तथा संतों का यही सिद्धान्त है तुम भी सदा ब्रह्माभ्यास करते रहो।

सद्गुरु : हे शिष्य पंचदशी तृप्ति दीप में श्लोक १०६ में बताया है।

तच्चिन्तनं तत्कथनमन्योऽन्यं तत्प्रबोधनम् ।
एतदेक परत्वंच ब्रह्माभ्यास विदुर्बुधा ।। १०६ ।।

ब्रह्म का ही चिंतन करना उसी की बातें करना एक दूसरे को उसी को समझाना तथा सदा केवल तन्निष्ठ होकर रहना इसी को ज्ञानीजन ब्रह्माभ्यास कहते हैं।

शिष्य : हे भगवन् ब्रह्माभ्यास मुझको कृपाकर अच्छी प्रकार से बताइये ताकि मैं उसका अभ्यास करूँ ?

सद्गुरु : हे प्रिय शिष्य तुम सदा इस प्रकार से अभ्यास करो कि 'मैं शरीर नहीं' शरीर मेरा नहीं, शरीर पंच भूतों का है, मैं शरीर को जानने वाला साक्षी सच्चिदानन्द स्वरूप हूँ। अस्ति भांति प्रिय जो सर्व व्यापी ब्रह्म है 'सोऽहम्। जो मैं सच्चिदानन्द आत्मा हूँ, सो ही सर्व व्यापी ब्रह्म है। अहा ! मुझे शस्त्र काट नहीं सकते, अग्नि जला नहीं सके, जल गीला नहीं कर सके, वायु सुखा नहीं सके, क्योंकि मैं आत्मा निराकार हूँ। जब मैं शरीर नहीं तब मेरा जन्म मरण कहाँ ? जब मैं प्राण नहीं तब भूख प्यास कहाँ है मुझ में ? जब मैं मन नहीं तब मुझ में सुख दुख: का भोग कहाँ ? हाँ, मैं आनन्द स्वरूप अवश्य

हूँ ? जब मै बुद्धि नहीं तब मुझ मे ज्ञान अज्ञान कहाँ ? हाँ ! मैं ज्ञान स्वरूप अवश्य हूँ। जब मैं अंतःकरण नहीं तो मुझ में कर्मों का कर्तापना कहाँ ? हाँ ! मैं कर्तापना का साक्षी अवश्य हूँ। जब मैं सूक्ष्म शरीर नही तब मुझमे इस लोक में आना परलोक में जाना कहाँ ? हाँ, आकाश की तरह व्यापक अवश्य हूँ। अहा ? मुझ में कोई रोग नहीं मैं स्वस्थ्य हूँ, मैं आनन्द स्वरूप हूँ। अहा ? मैं अरोग्य हूँ। अहा ? मै सर्व व्याधियों से रहित अखण्ड़ पूर्ण परमानन्द स्वरूप हूँ। मैं विज्ञान धन नित्य आनन्द हूँ। ॐसोऽहम्, शिवोऽहम् परात्परोऽहम्, निराकारोऽहम् निर्गुणोऽहम्, निर्विकारोऽहम्, निर्विकल्पोऽहम्, निर्मलोऽहम्, निश्चयलोऽहम्, निरंजनोऽहम्, शुद्धोऽहम्, बुद्धोऽहम्, सच्चिदानन्द स्वरूपोऽहम्, अहं ब्रह्मास्मि सर्व खल्विदं ब्रह्म। हे शिष्य तुम सदा यही अभ्यास करो, कि "मैं शरीर नहीं, शरीर मेरा नहीं, शरीर पंच भूतों का है। मुझ में और शरीर में बहुत अंतर है। यह शरीर अनात्मा है, मैं आत्मा हूँ। यह शरीर असत्य है मैं तीनों काल (भूत, भविष्य, वर्तमान) में सत्य हूँ। शरीर जड़ है, मैं शरीर इन्द्रियां प्राण मन बुद्धि आदि को जानने वाला चेतन साक्षी आत्मा हूँ। शरीर नाना व्याधियों (शरीरं व्याधि मन्दिरम्) का घर है। मैं सदा आनन्द स्वरूप हूँ। शरीर अनेक है, मैं सभी शरीरों में एक हूँ। यह शरीर क्षेत्र है, मैं सभी शरीरों में क्षेत्रज्ञ हूँ। शरीर साक्ष्य है, मैं साक्षी हूँ। शरीर द्रश्य है, मैं द्रष्टा हूँ। शरीर उपद्रश्य है, मैं उपद्रष्टा हूँ। शरीर विकारी है मैं निर्विकार हूँ शरीर साकार है, मैं निराकार हूँ। शरीर क्षर है

मैं अक्षर हूं। शरीर व्यय है, मैं अव्यय हूं। शरीर व्यक्त है, मैं अव्यक्त हूं। शरीर खण्ड है, मैं अखण्ड हूं। शरीर मलीन है मैं निर्मल हूं। शरीर चल है, नैं अचल हूं। शरीर शांत है, मैं अनंत हूं। शरीर नाशी है, मैं अविनाशो हूं शरीर सावयव है, मैं निरवयव हूं। शरीर सक्रिय है, मैं निस्क्रिय हूं। शरीर सद्वय है, मैं अद्वय हूं। शरीर एक देशी है, मैं सर्व देशी हूँ। शरीर कला सहित है, मैं निष्कल हूं। शरीर सापेक्ष है, मैं निर्पेक्ष हूं। शरीर प्रकृति है, मैं पुरुष हूं। शरीर क्षय है, मैं अक्षय हूं। शरीर कल्पित है, मैं अधिष्ठान हूं। शरीर विवृत है मैं, विवृताधिष्ठान हूँ। शरीर मृषा है, मैं अमृषा हूं शरीर भौतिक है, मैं अभौतिक हूं। शरीर देह है, मैं देही हूं। यह शरीर है, मैं शरीरि हूं। शरीर मायिक है. मैं अमाया हूं। शरीर सविकल्प है, मैं निर्विकल्प हूं। शरीर ससंग है, मैं निसंग हूं। शरीर संसारी है मै असंसारी हूं। शरीर कर्ता है, मैं अकर्ता हूं। शरीर भोक्ता है मैं, अभोक्ता हूं। शरीर सरूप है, मैं निरूप हूं। शरीर सोपमा है, मैं निरूपमा हूं। शरीर उप है, मैं अनूप हूँ। शरीर सांग है, मैं असंग हूँ। शरीर छेद्य है, मैं अछेद्य हूँ। शरीर क्लेद्य है, मैं अक्लेद्य हूँ। शरीर शौच्य है, मैं अशौच्य हूँ। शरीर का जन्म होता है, मैं अजन्मा हूं। शरीर अवस्थायुक्त है, मैं अवस्था से रहित हूँ। शरीर जर्जर है, मैं निर्जर हूं। मैं अजर हूँ। शरीर मरता है, मैं अमर हूँ। शरीर शव है, मैं शिव हूं। शरीर अकल्याण है, और मैं कल्याण स्वरूप हूँ। शरीर सगुण है, मैं निर्गुण हूं। शरीर पंचकोश वाला है, मैं पंच कोशातीत हूँ। शरीर

तीनों अवस्था वाला है, मैं त्रय अवस्थातीत हूँ। शरीर पार वाला है, मैं अपार हूँ। शरीर इतिवाला है, मैं नेति नेति हूँ। शरीर अवधि वाला है, मैं अनवधि हूँ। शरीर वध्य है, मैं अवध्य हूँ। शरीर यह अनित्य है, मैं नित्य हूँ। शरीर अशाश्वत है, मैं शाश्वत हूँ। शरीर अशुचि है, मैं शुचि हूँ। शरीर द्वन्द्वयुक्त है, मैं निर्द्वन्द्व हूं। शरीर चिन्त्य है मैं अचिन्त्य हूं शरीर ग्राह्य है, मैं अग्राह्य हूँ। शरीर च्युत है, मैं अच्युत हूँ। शरीर प्रकाश्य है, मैं प्रकाशक हूँ। शरीर सदेह है, मैं विदेह हूँ। शरीर सेन्द्रिय है, मैं निरेन्द्रिय हूँ। शरीर क्षुब्ध है, मैं अक्षुब्ध हूं। शरीर नूतन है, मैं पुरातन हूँ। शरीर गोचर है, मैं अगोचर हूँ। शरीर क्षुष्ण है, मैं अक्षुष्ण हूँ। शरीर अवस्तु है, मैं वस्तु हूँ। शरीर सशंक है, मैं निशंक हूँ। शरीर प्रेय है, मैं श्रेय हूँ। शरीर मूर्त है, मैं अमूर्त हूँ। शरीर अवास्तविक है, मैं वास्तविक हूँ। शरीर बंधरूप है, मैं मुक्तस्वरूप हूँ। शरीर सभेद है, मैं अभेद हूँ। शरीर सादि है, मैं अनादि हूँ। शरीर अपमार्थि है, मैं परमार्थ हूँ। शरीर साधन धाम है, मै साध्य हूँ। शरीर भोगायतन है, में भोगातीत हूं। शरीर अपर है, मैं पर हूँ। शरीर अकूटस्थ है, मै कूटस्थ हूँ। शरीर आधेय है, मैं आधार हूँ। शरीर सनाम है, मैं अनामी हूँ। शरीर सजाति है, मैं अजाति हू। शरीर सवर्ण है, मै अवर्ण हूँ। शरीर आश्रमी है, मैं अनाश्रमी हूँ। शरीर पराक है, मै प्रत्यक् हूँ। शरीर अतत्त्व है, मैं तत्व हूँ। शरीर अपूर्ण है, मैं पूर्ण हूँ। शरीर परिमित है, और मैं अपरिमित हूं। शरीर अस्थिर है, मै स्थिर हूँ। शरीर नश्वर है, मैं अनश्वर हूँ। शरीर परिवर्तनशील है, मैं अपरिवर्तनशील

हूं। शरीर तुच्छ है, मैं महान हूं। शरीर सीमित है, मैं असीमित हूं। शरीर सोपाधि है, मैं निरूपाधि हूं। शरीर सविशेष है, मैं निर्विशेष हूं। शरीर सांश है, मै निरंश हूं। शरीर सरूज है, मैं निरूज (अरूज) हूं। शरीर सयोनि है, मैं अयोनि हूँ। शरीर दोषयुक्त है, मैं निर्दोष हूं। शरीर यज्ञशाला है, मैं अधियज्ञ हूं। शरीर दभ्रयुक्त है, मैं अदभ्र हूं। शरीर तुलनायुक्त है, मैं अतुल्य हूं। शरीर का नाप है, मैं अनाप हूं। शरीर सगाध है, मैं अगाध हूं। शरीर सरज है, मैं विरज हूं। शरीर मध्य व अन्य पुरुष हैं, मैं उत्तम पुरुष हूं। शरीर महद् ब्रह्म है, मैं परब्रह्म हूं। शरीर लख है, मैं अलख हूं। शरीर सगोत्र है, मैं अगोत्र हूं। शरीर सुगम है, मैं अगम हूं। शरीर भंग है, मैं अभंग हूं। शरीर चलायमान है, मैं निश्चल हूं। शरीर द्वैत है, मैं अद्वैत हूं। शरीर घड़ा हुआ है, मैं अणघड़ हूं। शरीर वाण है, मैं निर्वाण हूं। शरीर अल्पशक्ति वाला है, मैं सर्वशक्ति हूं। शरीर अल्पज्ञ है, मैं सर्वज्ञ हूँ। शरीर परिच्छिन्न है, मैं व्यापक हूं। शरीर नाना है, मैं नाना शरीरों में एक हूं। शरीर पराधीन है, मैं स्वाधीन हूं। शरीर असमर्थ है, मैं समर्थ हूं। शरीर एकदेशी है, मैं सर्वदेशी हूं। शरीर काल परिच्छेद है, मैं सर्व काल में हूं। शरीर वस्तु परिच्छेद है, मैं सभी वस्तुओं में ओतपोत हूँ। शरीर परतंत्र है, मैं स्वतंत्र हूं। शरीर सेवक है, मैं स्वामी हूं। शरीर लौकिक है, मैं अलौकिक हूं। शरीर विषम है, मैं सब में सम हूं। शरीर यह इच्छायुक्त है, मैं अनीह हूं। शरीर विगत है, मैं अविगत हूं। शरीर प्रमेय है, मैं अप्रमेय हूं। शरीर

सामय है, मैं अनामय हूं। शरीर रंजन (अंजन) है, मैं निरञ्जन हूं। शरीर कामनायुक्त है, मैं अकाम हूँ। शरीर क्रोध युक्त है, मैं अक्रोध हूँ। शरीर मोह युक्त है, मैं निर्मोह हूं। शरीर शोक युक्त है, मैं अशोक हूं। शरीर सजेय है, मैं अजेय हूँ। शरीर लिप्त है, मैं अलिप्त हूँ। शरीर रोगी है, मैं अरोगी हूं। शरीर व्याधि है, मैं अव्याधि हूँ। शरीर वाच है, मैं अवाच हूं। शरीर कृतिम है, मैं अकृतिम हूं। शरीर अमंगल है, मैं मंगल हूं। शरीर अकल्याण है, मैं कल्याण स्वरूप हूं। शरीर ग्राह्य है, और मैं अग्राह्य हूं। शरीर कल है, मैं अकल हूं। शरीर अवधि है, मैं निरवधि हूं। शरीर लिप्त है, मैं अलिप्त हूं। शरीर आधेय है, मैं आधार हूं। शरीर गोचर है, मैं अगोचर हूं। शरीर हृषिक है, मैं हृषिकेश हूँ। शरीर प्रमाण है, मैं अप्रमाण हूं। शरीर च्युत है, मैं अच्युत हूं। शरीर अनिष्ट है, मैं इष्ट हूं। शरीर दृष्टि मुष्टि में आता है, मैं दृष्टि मुष्टि से रहित हूं। शरीर अनात्मा है, मैं आत्मा हूं। शरीर अशुद्ध है, मैं शुद्ध हूं। शरीर व्यतिरेक है, मैं अन्वय हूं। शरीर व्यभिचारी है, मैं अव्यभिचारी हूँ। शरीर असम्यक है, मैं सम्यक हूं। शरीर आवृत है, मैं अनावृत हूँ। शरीर आश्रित है, मैं आश्रय हूँ। शरीर अल्प है, मैं भूमा हूँ। शरीर पर प्रकाश है, मैं स्वयं प्रकाश हूँ। शरीर अज्ञात है, मैं ज्ञाता हूँ। शरीर कर्त्ता है, मैं अकर्ता हूँ। शरीर भोगता है, मैं अभोक्ता हूँ। शरीर ध्याता है, मैं ध्येय हूँ। शरीर यह कल्पित है, मैं कल्पक हूँ। शरीर अपूर्ण है, मैं पूर्ण हूँ। सबमें अस्ति भाति प्रिय से सभी

कल्पित नामरूप का आधार मैं ही हूँ। हे शिष्य सदा जिज्ञासु को ऐसा अभ्यास, निदिध्यासन। नि—निरन्तर, "दि–दीर्घकाल तक, धी,—अपनी बुद्धि को, आसन—लगी रखनी चाहिये। निरन्तर दीर्घकाल तक अपनी बुद्धि में तेल धारावत अभ्यास बढाना चाहिये अनात्म वृत्तियाँ का त्रिस्कार करना चाहिये। और आत्माकार वृत्तियाँ धारण करना चाहिये। श्रुति में भी यहि अभ्यास बताया है ।।वराहोपनिषद् ।।

मच्चिन्तनं मत्कथनममन्योन्यं मत्प्रभाषणम् ।
मदेक परमो भूत्वाकालं नय महामते ।।

भगवान वराह रूप धारी ऋभो ऋषि से कहते हैं कि हे ऋभो! मुझ चेतन आत्मा का ही चिन्तन करो। मुझ चेतन आत्मा का ही कथन करो। परस्पर मिलकर के भी मुझ आत्मा का ही भाषण किया करो। इस प्रकार मेरे परायण हुआ समय को व्यतीत करो इसी का नाम ब्रह्माभ्यास है।

हे शिष्य तुम्हारे दृढ़ बोध के हेतु मैं अन्य श्रुतिस्मृति शास्त्र पुराणों का प्रमाण बतलाता हूँ।

।। तेजबिन्दू पनिषद् (अ. ३)

कुमारः पितरमात्मानुभवमनु ब्रूहीति पप्रच्छ।

सहोवाच परः शिवः ।। पर ब्रह्म स्वरूपोऽहं परमानन्द-मस्म्यहम्। केवलं ज्ञान स्वरुपोऽहं केवलं परमोऽस्म्यहम् ।।१।।

षडानन कुमार अपने पिता भगवान शिवजी से पूछते हैं पिताजी ! कृपया मेरे प्रति आत्मानुभव कहिये। भगवान शंकर ने कहा कि हे कार्त्तिकेय ! मैं ही परमानन्द स्वरूप हूँ, केवल ज्ञान स्वरूप भी मैं ही हूँ, मैं केवल, केवल परम तत्त्व हूँ।

केवलं शान्त रूपोऽहं केवलं चिन्मयोऽस्म्यहम् ।
केवलं नित्यरूपोऽहं केवलं शाश्वतोऽस्म्यहम् ।।२।।

मैं केवल शान्त रूप हूँ चिन्मय भो मैं ही हूँ, केवल नित्य स्वरूप भी मैं ही हूँ, सभी विकारो से रहित एक रस रहने वाला निरंजन मैं ही हूँ।

आत्मानन्द स्वरूपोऽहं सत्यानन्दोऽस्म्यहं सदा ।
आत्माराम स्वरूपोऽस्मि ह्यहमात्मा सदा शिवः ।।३।।

मैं ही आत्मानन्द स्वरूप हूँ सदा सत्य आनन्द भी मैं ही हूँ, मैं सब का आत्मा सदा शिव हूँ।

भूमानन्द स्वरूपोऽस्मि भाषा हीनोऽस्म्यहम् ।
स्र्वाधिष्ठानरूपोऽस्मि सर्वदाचिदघनोऽस्म्यहम ।।४।।

मैं सर्वत्र व्यापक आनन्द स्वरूप भूमा हूँ, नाम रूप की कल्पना से रहित भी मैं हूँ, इस संसार रूपी कल्पना का अधिष्ठान भी मैं ही हूँ चिद्घनानन्द भी मैं हूँ।

असदेव गुणं सर्वं सन्मात्र महमेवहि ।
स्वात्ममन्त्रं सदापश्येतस्वात्ममन्त्रं सदाभ्यासेत ।।७।।

ये तीनों गुण और गुणो का कार्य प्रपञ्च असत् है, मैं आत्म सद्रूप हूँ, इसलिये अपने आत्मा के बोधक मंत्र को ही देखना चाहिये उसीका ही सदा अभ्यास करना चाहिये।

अहं ब्रह्मास्मि मन्त्रोऽयं द्रश्य पापं विनाशयेत।
अहं ब्रह्मास्मि मन्त्रोऽयमन्य मंत्रं विनाशयेत ।।८।।

"अहं ब्रह्मास्मि" मैं ब्रह्म हूँ, यह मंत्र इस जन्म के किये हुये प्रत्यक्ष पाप को नाश करता है, "अहं ब्रह्मास्मि" यह मंत्र अन्य मंत्रों को नष्ट कर डालता है अर्थात् "अहं ब्रह्मास्मि" जपने वाले के ऊपर किसी मँत्र का प्रयोग करके शत्रु अनिष्ट नहीं कर सकता ।।८।।

अहं ब्रह्मास्मि तन्त्रोऽयं देह दोषं विनाशयेत।
अहं ब्रह्मास्मि मन्त्रोंऽयं जन्म पापं विनाशयेत ।।९।।

"अहं प्रह्मास्मि" यह मंत्र जन्म मरण रूपी पाप का विनाशक है, अर्थात अहं ब्रह्मास्मि जपने वाले और समझने वाले का कभी जन्म नहीं होता। "अहं ब्रह्मास्मि" यह मंत्र देह के सभी दोषों को नष्ट कर देता है।

अहं ब्रह्मास्मि मन्त्रोऽयं मृत्युपाशं विनाशयेत्।
अहं ब्रह्मास्मि मन्त्रोऽयं द्वैत दुखं विनाशयेत् ।।१०।।

"अहं ब्रह्मास्मि" यह मंत्र मृत्यु की फाँसियों को काट डालता है "अहं ब्रह्मास्मि" यह मंत्र द्वैतरूपी दुख को नष्ट कर देता है।।१०।।

अहं ब्रह्मास्मि मन्त्रोऽयं भेद बुद्धि विनाशयेत् ।
अहं ब्रह्मास्मि मन्त्रोऽयं चिन्ता दुखं विनाशयेत ।।११।।

"अहं ब्रह्मास्मि" यह मंत्र भेद बुद्धि को नष्ट कर देता है "अहं ब्रह्मास्मि" यह मंत्र चिंता दुखों को हमेशा के लिये नष्ट कर देता है ।।११।।

अहं ब्रह्मास्मि मन्त्रोऽयं कोटि दोषं विनाशयेत ।
अहं ब्रह्मास्मि मन्त्रोऽयं सर्व तन्त्रं विनाशयेत ।। १२ ।।

"अहं ब्रह्मास्मि" यह मंत्र करोड़ों दोषों को नष्ट करने वाला है "अहं ब्रह्मास्मि" यह मंत्र सभी मंत्र तंत्रों को शांत कर देता है ।।१२।।

सर्व मन्त्रान समुत्सृज्य एवं मन्त्रं समभ्यासेत ।। १५ ।।

भगवान शंकर कहते हैं कि हे षण्मुख सभी मंत्रों को त्याग करके जिज्ञासु को इसी का ही अभ्यास करना चाहिये ।।१५।।

स हो वाच परः शिवः चिदात्माहं परात्माहं
निर्गुणोऽहं परात्परः । (अ० ४)

वे परम शिव बोले मैं चिदात्मा और परमात्मा हूँ, मैं निर्गुण निराकार पर से पर हूँ ।

देह त्रयातिरिक्तोऽहं शुद्ध चैतन्यमस्म्यहम ।
ब्रह्माहमिति ।

मैं स्थूल सूक्ष्म कारण इन तीनों देहों से भिन्न हूँ। मैं शुद्ध चैतन्य ब्रह्म हूँ।

आनन्द घन रूपऽस्मि परानन्द घनोऽस्म्यहम्।
परमानन्द पूर्णोऽस्मि स जीवन्मुक्ति उच्यते ।। ३ ।।

मैं आनन्द घन परमानन्द स्वरूप हूँ, मैं सच्चिदानन्द ब्रह्म हूँ, इस प्रकार का जिसको दृढ़ निश्चय है वह जीवन मुक्त है।

न मे जरा न मे बाल्यं न मे योवनमण्वपि।
अहं ब्रह्मास्म्यहं ब्रह्मास्म्यहं ब्रह्मेतिनिश्चयः ।।

बाल्यावस्था यौवन अवस्था वृद्धावस्था ये तीनों मेरे में नहीं है मैं ब्रह्म हूँ, मैं सच्चिदानन्द ब्रह्म हूँ, ऐसा मेरा दृढ निश्चय है।

ब्रह्मैवाहं न संसारी ब्रह्मैवाहं न मे मनः।
ब्रह्मैवाहं न मे बुद्धिर्ब्रह्मैवाहं न चेन्द्रियः ।। (अध्याय ६)

मैं निश्चय ही ब्रह्म हूँ। संसारी नहीं हूँ। मैं ब्रह्म हूँ। मेरा मन नहीं है। मैं ब्रह्म हूँ। मेरी बुद्धि नहीं है ।।१।। (अध्याय ६)

अहमेव हरिः साक्षादहमेव सदा शिवः।
शुद्ध चैतन्य भावोऽहं शुद्ध सत्वानुभावनः ।। २ ।।

।। मैत्रेयी उपनिषद ।। (अ० ३)

अहमेवास्मि सिद्धोऽस्मि शुद्धोऽस्मि परमोऽस्म्यहम
अहमस्मि सदासोऽस्मि नित्योऽस्मि विमलोऽस्म्यहम ।।२।।

सिद्ध रूप मैं हूँ । पर रूप मैं हूँ । शुद्ध रूप मैं हूँ । हमेशा रहने वाला हूँ । नित्य निर्मल हूँ ।

विज्ञानोऽस्मि विशेषोऽस्मि सोमोऽस्मि सकलोऽस्म्यहम् ।
शुभोऽस्मि शोक हीनोऽस्मि चैतन्योऽस्मि समोऽस्म्यहम् ।।

मैं विज्ञानरूप हूँ । मैं विशेषरूप हूँ । सामान्यरूप मैं हूँ । सर्वरूप मैं हूँ । शुभ रूप मैं हूँ । शोक से रहित मैं हूँ । चैतन्यरूप मैं हूँ । समरूप मैं हूँ ।।३।।

मानापमानहीनोऽस्मि निर्गुणोऽस्मि शिवोऽस्म्यहम् ।
द्वैताऽद्वैतविहीनोऽस्मि द्वन्द्वहीनोऽस्मि सोऽस्म्यहम् ।।४।।

मान अपमान से रहित मैं हूँ । मैं निर्गुण हूँ । शिव हूँ । मैं द्वैत और अद्वैत से रहित हूँ । मैं राग द्वैषादि द्वन्द्वो से रहित हूँ । और वह मै आप हूँ ।।४।।

भावाभावविहीनोऽस्मि भासाहीनोऽस्मि भास्म्यम् ।
शून्याशून्यप्रभावोऽस्मि शोभनाशोभनोऽस्म्यहम् ।।५।।

भाव और अभाव से रहित मैं हूँ । कान्ति से रहित मैं हूँ । कान्ति रूप भी मैं हूँ । शून्न और अशून्न का प्रभाव रूप मैं हूँ । शोभन और अशोभन मैं हूँ ।।५।।

आश्रयानाश्रयहीनोऽस्मि आधार रहितो ऽ स्म्यहम् ।
बन्धमोक्षादिहीनोऽस्मि शुद्ध ब्रह्मास्मि सोऽस्म्यहम् ।।६।।

आश्रय अनाश्रय की कल्पना से रहित मैं हूँ। आधार रहित मैं हूँ। वंध मोक्ष की कल्पना रहित मैं हूँ। शुद्ध ब्रह्म मैं हूँ ॥६॥

चिन्तादिसर्वहीनोऽस्मि परमोऽस्मि परात्परः।
सदाविचाररूपोऽस्मिनिर्विचारोऽस्मिसोऽस्म्यहम् ॥१०॥

शोक चिंता से रहित मैं हूँ। मैं परम रूप हूँ, परे से परे परम तत्त्व मैं हूँ। सदा विचार रूप मै हूँ। सदा विचार रहित भी मैं हूँ। अर्थात् सभी कल्पना से रहित मैं हूँ ॥१०॥

अकारोकाररूपोऽस्मिमकारोऽस्मि सनातनः।
ध्यातृध्यानविहीनोऽस्मिध्येय हीनोऽस्मि सोऽस्म्यहम् ॥११॥

अकार, उकार, मकार, रूप सनातन ओम् मैं हूँ। ध्याता-ध्यान ध्येय से रहित मैं हूँ ॥११॥

सर्वपूर्णस्वरूपोऽस्मि सच्चिदानन्द लक्षणः।
सर्व तीर्थ स्वरूपोऽस्मि परमात्मास्म्यहं शिवः ॥१२॥

सच्चिदानन्द स्वरूप सर्वत्र परिपूर्ण परमात्मा मैं हूँ। सर्व तीर्थ स्वरूप शिव रूप परम तत्व मैं ॥१२॥

लक्ष्यालक्ष्यविहीनोऽस्मि लयहीनरसोऽस्म्यहम्।
मातृमानविहीनोऽस्मिमेयहीन शिवोऽस्म्यहम् ॥१३॥

लक्ष्य अलक्ष्य की कल्पना से रहित मैं हूँ। मातृ मान मेय से रहित अर्थात् (नापने वाला, नाप, नापने योग) से रहित, अखंड एक-रस, रूप शिव तत्व मैं हूँ ।।१३।।

सर्व प्रकाशोऽस्मि चिन्मात्रज्योतिर स्मयहम् ।
कालत्रयविमुक्तोऽस्मिकामादि रहितोऽस्म्यहम् ।।१४।।

सर्व प्रकाश रूप, चिन्मात्र ज्योति, तीनों काल से रहित, तथा काम आदि विकारों से रहित मैं हूँ ।।१४।।

सर्वदासमरूपोऽस्मि शान्तोऽस्मि पुरुषोत्तमः ।
एवंस्वानुभवो यस्य सोऽहमस्मि न संषयः ।।१५।।

हमेशा समरूप, शान्तरूप, पुरुषोत्तम पुरुष मैं हूँ, ऐसा जिसका अपना अनुभव है, वह मैं हूँ, इसमें किंचित भी संषय नहीं है ।।१५।।

।। सर्वंसारोपनिषद् ।।

ब्रह्मैवाहं सर्व वेदान्त वेद्यंऽनाहं वेद्यंऽव्योमवातादि रूपम् ।
रूपंनाहंनामनाहं न कर्म ब्रह्मैवाहं सच्चिदानन्द रूपम्।।१८।।

ब्रह्मरूप सर्व वेदान्तों से जानने योग्य आकाश वायु के समान निराकार होने से, अवेद्य स्वरूप और कर्म से रहित मैं ही हूँ। सच्चिदानन्द ब्रह्म स्वरूप हूँ।

नाहं देहो जन्म मृत्यु कुतो मे नाहं प्राणक्षुत् पिपासे कुतो मे।
नाहं चेतः शोक मोहौ कुतो मे नाहं कर्त्ता बन्ध मोक्षो कुतो
में ।।१६।।

मैं देह नहीं हूँ, मुझको जन्म मरण कैसे होवे, मैं प्राणरूप नहीं हूँ, इससे मुझ में क्षुधा पिपासा नहीं, मैं चित नहीं हूँ, इससे मुझ में शोक मोह कैसे होवे, मैं कर्त्तापन से रहित हूँ, भला फिर मेरे को बंध मोक्ष कैसे हो। अर्थात् बंध मोक्ष से रहित हूँ ।।१६।।

।। अध्यात्मोपनिषद् ।।

असङ्गोऽहमनङ्गोऽहमलिङ्गोहमहं ।
प्रशान्तोऽहमनन्तोऽहं परिपूर्णश्चिरन्तनः ।।२४।।

मैं असंग हूँ, मैं हाथ पाँव आदि अंगों से रहित हूँ। मैं लिंग शरीर रहित साक्षात् विष्णु हूँ। प्रशान्त हूँ, अनंत हूँ, परिपूर्ण सनातन ब्रह्म मैं हूँ ।।२४।।

अकर्ताहम भोक्ताहम विकारोऽहमव्यय :।
शुद्धो बोध स्वरूपोऽहं केवलोऽह सदाशिवः ।।२५।।

मैं पाप पुन्य का कर्त्ता नहीं हूँ, इसलिये सुख दुख का भोक्ता भी नहीं हूँ, मैं सभी विकारों से रहित अव्यय ब्रह्म हूँ, शुद्ध बोध स्वरूप अद्वितीय सदाशिव मैं हूँ ।।२५।।

स्वयं ब्रह्मा स्वयं विष्णु स्वयंमिन्द्रःस्वयंशिवः ।
स्वयं विश्वमिद सर्व स्वस्यादन्यन्न किञ्चन ।।२०।।

मैं स्वयं ही ब्रह्मा स्वयं ही विष्णु स्वयं शिव स्वयं इन्द्र और स्वयं ही जगत हूँ। अतः स्वयं से भिन्न कुछ भी नहीं है।

।। कैवल्योपनिषद् ।।

अणोरणीयानहमेवतद्वन्महानहं विश्वमिदं विचित्र ।
पुरातनो हं पुरुषोऽहमीशो हिरण्यमयोऽहं
शिवरूपमस्मि ।।२३।।

सूक्ष्म से सूक्ष्म मैं हूँ। इसी प्रकार महान भी मैं ही हूँ। यह विचित्र विश्व भी मैं ही हूँ। सनातन पुरातन परमात्मा रूप पुरुष भी मैं ही हूँ। माया विशिष्ट ईश्वर भी मैं हूँ। चतुरमुख ब्रह्मा भी मै ही हूँ। मंगलमय शिवरूप सच्चिदानन्द ब्रह्म मैं ही हूं।।२३।।

अपाणिपादोऽहमचिंत्यशक्तिःपश्याभ्य चक्षुःसशृणोम्यकर्णः।
अहं विजानामि विविक्तरूपो न चस्ति वेता मम
चित्सदाहम् ।।२४।।

मैं ब्रह्मरूप परमात्मा हाथ पाँव से रहित हूँ। फिर भी खूब दौड़ता और ग्रहण करता हूँ। क्योंकि मैं अचिन्त्य शक्ति हूँ। चक्षु रहित होने पर भी सब कुछ अच्छी तरह से देखता हूँ। कान रहित होने पर भी सब कुछ सुनता हूँ, (विविक्तरूप) मैं बुद्धि आदि से सर्वथा न्यारा हूँ, और सबको जानता हूँ। परन्तु मन बुद्धि मेरे को नहीं जान सकते मैं चेतन सर्वदा एक रस रहता हूँ।।२४।।

न पुन्य पापे मम नास्ति नाशो, न जन्म देहेंन्द्रियबुद्धिरस्ति।
न भूमि रापोवह्निरस्ति न चानिलोऽस्तिन चांबर च ।।२६।।

मुझ चेतन आत्मा को पुन्य पाप स्पर्श नहीं करते। मेरा कभी जन्म और नाश भी नहीं होता। नहीं मेरे कोई देह इन्द्रिय बुद्धि है। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाशरूप पंचभूत भी मेरे में नहीं है। अर्थात् मैं अखण्ड एक-रस अद्वितीय शुद्ध चेतन हूँ। एकं ब्रह्म द्वितीय नास्ति ।।२६।।

।। कुण्डिको० १७ ।।

नारायणोऽहं नरकान्तकोऽहं पुरुषोऽहं मीश्वरः ।
अखण्ड बोधोऽ हमशेष साक्षी निरीश्वरोऽहं च निर्ममः ।।

मैं नारायण हूँ, नरकान्तक (नरक का अन्त करने वाला) पुरुष और ईश्वर मैं हूँ मैं अखण्ड बोध (ज्ञान) स्वरूप सबका साक्षी, माया उपाधि युक्त ईश्वर भाव से रहित शुद्ध ब्रह्म निरीश्वर हूँ, अहंता ममता से रहित हूँ ।।कुण्डिको० १७।।

।। श्रीमद् भागवत् १२।५।११।।

अहं ब्रह्म परं धाम ब्रह्माहं परमं पदम ।।

(भा. १२।५।११)

जो मैं ब्रह्म (साक्षी आत्मा) हूँ वही परमपद रूप ब्रह्म है, वही मैं हूँ। भा. १२।५।११)

अहं देवी न चान्योऽस्मि ब्रह्मैवाहं न शोक भाक् ।
सच्चिदानन्द रूपोऽ हं स्वात्मानमिति चिन्तयेत
।। देवीभागवत ।।

'देवी ! मैं सर्वात्मा हूँ सबका स्वरूप ही हूँ, दुसरा कुछ नहीं, मैं ब्रह्म हूँ, मुझ में लेशमात्र भी शोक का प्रवेश नहीं हो सकता है, मैं सच्चिदानन्द स्वरूप हूँ । इस प्रकार स्वयं आत्मा में देवीजी के स्वरूप से अभिन्न चिंतन करें ।। देवी भागवत ।।

योऽसौ सर्वात्मक: शम्भू: सोऽहं शिवोऽस्म्यहम् ।
इति वै सर्व वाक्यार्थो वामदेव शिवोदित: ।।शिवपुराण।।

जो वह सर्वात्मक शिव है वह मैं हूँ शिवोऽहम् मैं ही कल्याण स्वरूप शिव हूँ इस प्रकार सभी महावाक्यों का अर्थ वामदेव से शिवजी ने कहा है । (शिव पुराण)

सोऽहमर्क: परं ज्योतिरर्क ज्योतिरहं शिव: ।
आत्मज्योतिरहं शुक्र:सर्व ज्योति रसावदोम् ।।
(महावाक्यो॰)

मैं वही चिदादित्य हूं, वही परमज्योति हूं, मैं वही सूर्य ज्योति हूं, मैं वही शिव तत्व हूं, मैं वही आत्म ज्योति हूं, सबका प्रकाशक उस ब्रह्म का स्वरूप एवं उससे भिन्न नहीं अभिन्न ज्योति हूं ।
(महावाक्यों॰)

अहं ब्रह्म परम ज्योतिः पृथिव्यबनलोन्भितम ।
अहं ब्रह्म परं ज्योतिर्वाय्वाकाश विवर्जितम ।।१।।

(ब्रह्मज्ञान–२ अग्निपुराणे)

अग्निदेव ने कहा मैं ज्योति (ज्ञानस्वरूप आत्मा) पृथ्वी, जल और अनल से रहित परब्रह्म हूं । मैं परब्रह्म ज्योति वायु आकाश से रहित हूं ।

नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्तं सत्यमानन्दमद्वयम् ।
ब्रह्माहमस्म्यहं ब्रह्मविज्ञान विमुक्त ओम ।।२२।।
अहं ब्रह्म परं ज्योतिःसमाधिर्मोक्षदः परः ।।२३।।

नित्य शुद्ध बुद्ध (ज्ञान स्वरूप) मुक्त सत्य और आनन्द अद्वय ब्रह्म मैं हूँ और मैं सविज्ञान विमुक्त ओम ब्रह्म हूँ । मैं पर ज्योति ब्रह्म समाधि और मोक्ष प्रदान करने वाला पर ब्रह्म हूं ।

(अग्निपुराण)

(योग वासिष्ठ निर्वाण प्रकरण)

नित्यं सर्वगतं शान्तं निर वद्यं निरञ्जनम् ।
निष्कलं निष्क्रियं शुध्दं ब्रह्माऽस्मि परं परम ।।

(योग. नि. ।।१२८।३४)

नित्य सर्व व्यापी शान्त सर्व दोश रहित निरंजन निष्कल केवल शुद्ध वह परब्रह्म मैं हूँ ।

(योग० नि० १२८।३४)

हेयोपादेय निर्मुक्तं सत्यरूपं निरिन्द्रियम् ।
केवलं सत्य संकल्पं शुद्धं ब्रह्माऽस्मयहं परम्

(योग. नि. १२८।३५)

हेय और उपादेय से निर्मुक्त सत्य स्वरूप इन्द्रिय रहित एक मात्र अपने संकल्प से असद्रूप भी इस जगत की सत्ता के सम्पादन में समर्थ सद्रूप केवल शुद्ध परब्रह्म ही मैं हूं।

(यो० नि० १२८।३५)

।। ग० पु० ब्रह्मध्यान ।।

नित्य शुद्धो बुद्धियुक्त सत्यानन्दाह्वयः परः ।
आत्माऽहं परम ब्रह्म परम ज्योति रे व तु ।।

जो नित्य शुद्ध ज्ञान स्वरूप सत्य परं एवं आनन्दमय है वही मैं आत्मा ही परम ब्रह्म एवं परम ज्योति स्वरूप हूं ।।

(ग० पु० ब्रह्मध्यान)

शिवोदाता शिवोभोक्ता शिवःसर्वमिदं जगत ।
शिवोज्योति सर्वत्र यः शिवःसोऽहमेवच ।।

शिव ही दाता है शिव ही भोक्ता है शिव ही यह सब जगत रूप है शिव ही की सर्वत्र जय होती है जो शिव है वही मैं हूँ ।।

(ग. पु. शिवार्चन विधान)

अहं आत्मा परं ब्रह्म सत्यं ज्ञानमनन्तकम् ।।३६।।

(ग०पु० अष्टांग योग कथन)

मैं आत्मा सत्य ज्ञान अनन्त स्वरूप ब्रह्म हूं ।।

(ग. पु. अष्टाँग यो. कथन)

अनुभूतेर भावेऽपि ब्रह्मास्मीत्येवचिंत्यताम ।
अप्यसत्प्राप्यतेध्यानान्नित्याप्तं ब्रह्म किं पुनः ।।

अनुभव के न होने पर भी "अहं ब्रह्मास्मि" मैं ब्रह्म हूँ यदि ऐसा चिंतन किया जाता है तो भी ब्रह्म को प्राप्त होता है, क्योंकि ध्यान से जब असत (मिथ्या वस्तु) की प्राप्ती हो जाती है तो फिर नित्य प्राप्त ब्रह्म के विषय में तो कहना ही क्या है ?

।। छान्दो० उ० (७।२५।१) ।।

अहमेवाधस्तादहमुपरिष्टादहं पश्चादहं पुरस्तादहं
दक्षिणतोऽहमुत्तरतोऽहमेवेदँ सर्वम् ।।

मैं ही नीचे हूँ मैं ही ऊपर हूँ मैं ही पिछे हूं मैं ही आगे हूँ मैं ही दायें हूँ मैं ही बायें हूँ मैं ही यह सब हूं ।।

(छा. ७/२५/१)

(स्कन्दो० ५)

स एव ज्योतिषां ज्योतिःस एव परमेश्वरः ।
स एव हि परं ब्रह्म तद् ब्रह्माहं न संषय ।। (स्कन्दो० ५)

(स) अर्थात् वह ही ज्योतियों का ज्योति है (स) वही परमेश्वर है (स) वह पर ब्रह्म है वह ब्रह्म मैं हूं 'सोऽहम्' इसमें संषय नहीं है। (स्कन्दो०)

अहं सर्वमिदं विश्वं परमात्माहमच्युतः।
नान्यदस्तीति संवित्त्या परमासाह्यंहक्रुतिः ।।

(महो० ५/८६)

मैं सम्पूर्ण विश्व स्वरूप हूँ, अच्युत परमात्मा हूँ, मुझ से भिन्न कुछ भी नहीं है इस प्रकार का ज्ञानात्मक अहं भाव श्रेष्ट कल्याण कारक है। (महो० ५/८६)

(अन्नपूर्णो० ५।६४।६५)

अनन्तमजमव्यक्तमजरं शान्तमच्युतम् ।
अद्वितीयमनाद्यन्तं यदाद्यमुपलम्भ नम् ।।६४।।
एकमाद्यन्तरहितं चिन्मात्रममलं ततम् ।
खादप्यतितरां सूक्ष्मं तद ब्रह्मास्मि न संषय ।।६५।।

जो अनन्त अजन्मा अव्यक्त अजर शांत अच्युत अद्वितीय आदि अन्त रहित सबसे प्रथम अनुभव रूप प्राप्त एक केवल चेतन रूप निर्मल व्यापक और आकाश से भी अतिशय सूक्ष्म है, वही ब्रह्म मैं हूँ इसमें संषय नहीं है। (अन्नपूर्णो० ५/६४/६५)

(अवधूत गीता १।२७)

शिवं न जानामि कथं वदामि शिवं न जानामि कथं भजामि।
अहं शिवश्चेत्परमार्थ तत्वं समस्वरूपं गगनोपमं च।

यदि मैं आकाश की उपमा वाला सर्वत्र फैला हुआ सम स्वरूप परमार्थ तत्त्व शिव ही हूं, तो फिर अपने से भिन्न शिव को मैं नहीं जानता फिर कैसे कहूँ ? तथा अपने भिन्न मैं शिव को नहीं जानता, तो फिर भजन कैसे करूँ ? क्योंकि भिन्न मान करके ही कुछ कहना व भजन करना बनता है।

।। अष्टावक्र गीता ।। (प्र० १९।५)

क्व स्वप्न क्व सुषुप्ति क्वच जागरणं तथा ।
क्व तुरीयं भयं वापि स्वमहिम्नि स्थितस्य मे ।।५।।

मुझ आत्म स्वरूप में न जाग्रत न स्वप्न न सुषुप्ति है ये तीनों अवस्थायें बुद्धि के धर्म है सो बुद्धि ही मिथ्या भान होती है तुरीया अवस्था कहाँ है ? और भय कहाँ है ? सब अंतःकरण के धर्म हैं सो अंतःकरण भी मिथ्या है ।।५।।

क्व दूरं क्व समीपंवा बाह्यं क्वाभ्यान्तरं क्व वा ।
क्व स्थूलं क्व च वा सूक्ष्मं स्वमहिम्नि स्थितस्य मे ।।६।।

मेरे मैं दूर कहाँ ? समीप कहाँ ? ब्राह्य कहाँ ? अन्तर कहाँ ? स्थूल कहाँ ? सूक्ष्म कहाँ ? सर्वत्र परिपूर्ण में कुछ नहीं बनता ॥६॥

क्व मृत्युर्जीवितं वा क्वलोका: क्वास्य क्व लौकिकम्
क्व लय: क्व समाधिर्वा स्वमहि म्निस्थितस्य मे ॥७॥

अपनी महिमा में स्थित मुझ आत्मा में कहाँ मृत्यु ? कहाँ जीवित ? कहाँ जन्म ? कहाँ मरण ? कहाँ लोक ? कहाँ लोकों में होने वाले पदार्थ ? कहाँ लय कहाँ समाधि हैं ?

॥ अवधूतो० ८ ॥

सत्यचिद्घनमखण्डमद्वयं सर्वद्रश्य रहितं निरामयम् ।
यत्पदं विमलमद्वयं शिवं तत्सदाहमिति मौनमाश्रय ॥

जो सत्य चैतन्यधन, अखंड, अद्वय, सर्व दृश्य रहित, निरामय, निर्मल अद्वैत 'शिव' पद है वह सदा मैं ही हूँ 'ऐसा जानकर मौन ग्रहण करो । "शिवोऽहम्" ।

गुरुदेव ने कहा हे शिष्य मैंने वेद उपनिषट श्रुति स्मृति गीता रामायण भागवत पुरान आदि अनेक ग्रंथों का प्रमाण देकर अपने आत्म स्वरूप (ब्रह्माभ्यास) का निश्चय कराया अब तुमने क्या दृढता (निश्चय) किया सो अपना अनुभव प्रगट करो ।

शिष्य : बारम्बार डंड़वत प्रणाम श्री सद्गुरु देव के चरणों में करता हुआ हाथ जोड़ कर कहने लगा ?

अवधूतोपनिषद्

बद्धोऽस्मि भगवन् युक्ति युक्त मुक्तं त्वयोतमम् ।
कारणाभावतः कर्तृ नेदं ब्रह्मैति वेद्म्यहम्

हे भगवन् ! मैं आपका उत्तम और युक्ति-युक्त उपदेश से जान गया हूँ कि मैं ज्ञान स्वरूप हूँ तथा कारण के न होने से यह ब्रह्म जगत का उत्पादक नहीं हो सकता है यह भी मैं जानता हूँ ।

हे गुरुदेव ! आपने कृपा करके मुझको सभी ग्रंथों का सिद्धांत बताया आपकी अमृत वाणी सुन कर मैं कृत-कृत हो गया आपने सारा माना भार उतार दिया मेरे सभी संषय निवृत हो गये हैं। और अपने आप में स्थित हो गया हूँ । अब पूर्णरूप से यह निश्चय हो गया है कि "मैं शरीर नहीं" शरीर मेरा नहीं "शरीर पंच भूतों का है" मैं सबको जानने वाला आत्मा साक्षी सच्चिदानन्द स्वरूप हूँ । जो सच्चिदानन्द आत्मा हूं, सो ही सर्वव्यापी अस्ति भाँति प्रिय ब्रह्म है, सोऽहम् शिवोऽहम्, मैं कल्याण स्वरूप हूँ । मैं ही सब में रमने वाला होने वाला राम हूं । सब में बसने वाला होने से मैं ही वासुदेव हूं । सब में व्यापक होने से मैं ही विष्णु हूं । मैं ही ऋषिकेश हूँ । मैं हो सत् हूँ । मैं चेतन हूँ । मैं आनन्द हूं । मैं कूटस्थ हूं । मैं निराकार हूं । मैं निर्विकार हूँ । मैं निर्विकल्प हूं, मैं निरंजन हूं, मैं निरालेप हूं, मैं निराधार हूं, मैं निर्भय हूं,

मैं निष्प्रपंच हूँ, मैं नित्यतृप्त हूं, मैं नित्यमुक्त हूं, मैं निष्कलंक हूं, मैं निष्काम हूं, मैं नित्य उदित हूं, मैं निरन्तर हूं, मैं निरामय हूं, मैं निज स्वरूप हूं, मैं निर्मम हूं, मैं निरहंकार हूं, मैं निर्द्वन्द्व हूं मैं निर्विघ्न हूं, मैं नित्यस्वरूप हूं, मैं निर्विक्षेप हूं, मैं निर्मल हूं, मैं निर्भाया हूं, मैं निर्वाण हूं, मैं निर्गुण हूं, मैं निरूपाधिक हूं, मैं निस्कन्दरूप हूं, में निर्वाच पद हूं। मैं नित्य प्राप्त हूं, मैं नारायण हूं, मै अज्य हूँ, मैं अजन्मा हूँ, मैं अमर हूँ। मैं अभय हूँ, मैं अचल हूँ, मैं अक्रिय हूँ, मैं अदाह्य हूं, मैं अछेद हूँ, मैं अक्लेद्य हूं, मैं अशोष्य हूं, मैं अमृत्यु हूँ, मैं अव्यक्त हूँ, मैं अव्यय हूं, मैं अकृतिम हूँ, मैं असंग हूं, मैं अद्वय हूं, मैं अति सूक्ष्म हूं, मैं अच्युत हूं, मैं अनामी हूं, मैं ओंमकार हूँ, मैं अकाम हूं, मैं अद्वैत हूं, मैं अतीन्द्रिय हूँ, मैं अतिवर्णाश्रमी हूँ, मैं अमल हूँ, मैं अमन हूँ, मैं अभेद हूँ, मैं अखेद हूँ, मैं अक्षोभ हूँ, मैं अखंड हूँ, नैं अभंग हूँ, मैं अशोक हूँ, मैं अमोह हूँ, मैं अलोभ हूँ, मैं अक्रोध हूँ, मैं अगोचर हूँ, मैं अनूप हूं, मैं अरूप हूं, मैं अदृष्ट हूं, मै अकर्ता हूं, मैं अभोक्ता हूं, मैं अनन्त हूं मैं अपार हूं, मै अगाध हूँ, मैं अनादि हूँ, मैं अगम हूँ, मैं अविगत हूँ, मैं अधिष्ठान हूँ, मैं अलख हूँ, मैं अकल हूँ, मैं अविकारी हूं, मैं अनिह हूँ, मैं अमाया हूँ, मैं अनुभव स्वरूप हूं, मैं अटल हूं, मैं ब्रह्म स्वरूप हूँ, मैं साक्षी हूँ, मैं दृष्टा हूँ। मैं स्वच्छ हूँ, मैं पूर्ण निर्लेप हूँ, मैं आत्मा हूँ, मैं स्वयं प्रकाश हूँ, मै पंच कोशा-तीत हूँ, मैं देह त्रयका दृष्टा हूँ, मैं तीनों अवस्था का साक्षी हूँ, मैं नित्य तृप्त हूं, मैं सनातन हूं, मै चिन्मात्र हूँ, मैं चिदाकाश हूँ, मैं

चिद्घन हूं, मैं केवल हूं, मैं सम्यक हूं, मैं शून्य विज्ञान हूं, मैं कल्याण स्वरूप हूं, मैं मंगल रूप हूं, मैं शान्त रूप हूं, मैं ज्ञान स्वरूप हूं, मैं अक्षर हूं, मैं अनेकों में एक हूं, मैं सभी क्षेत्रों में क्षेत्रज्ञ हूँ मैं देश काल वस्तु परिच्छेद से रहित हूं, मैं सजाति विजाति स्वगत भेद से रहित हूँ, मैं सत्ता समान हूँ, मैं गंभीर हूँ, मैं परम पावन हूँ, मैं घन स्वरूप हूँ, मैं सुख धाम हूँ, मैं सत्तामात्र हूँ, मैं स्वतः स्वभाव हूँ, मैं नित्य स्थित हूँ, मैं परम प्रकाश हूँ, मैं निर्मलप्रकाश हूँ, मैं सर्वाधार हूँ, मैं ध्येय हूँ, मैं ज्ञेय हूँ, मैं पूज्य हूँ, मैं परम मौन स्वरूप हूँ, मैं सर्व त्रिपुटियों से रहित हूँ, मैं परम पद हूँ, मैं सर्व कल्पना रहित हूँ, मैं कालातीत हूँ, न मुझ में भूतकाल है, न मुझ में भविष्य काल है न मुझ में वर्तमान काल है, मैं परम शान्त स्वरूप हूँ, मैं चिदानन्द हूँ, मैं सर्वानन्द हूँ, मैं निजानन्द हूँ, मैं सम्पूर्णानन्द हूँ, मैं पूर्णानन्द हूँ, मैं केवलानन्द हूँ, मैं परमानन्द हूँ, मैं ब्रह्मानन्द हूँ, मैं मुक्तानन्द हूँ, मैं अखण्डानन्द हूं, मैं स्वरूपानन्द हूँ, मैं आत्मानन्द हूँ, मैं अखिलानन्द हूँ, मैं भूमानन्द हूँ, मैं शिवानन्द हूँ, मैं गुप्तानन्द हूं, मैं पूर्णानन्द हूं, मैं सच्चिदानन्द हूं, मैं शान्तानन्द हूं, मैं चिदानन्द हूँ, मैं विशुद्धानन्द हूँ, मैं नित्यानन्द हूँ, मैं अस्तिभाति प्रिय से बिराजमान हूँ, नामरूप में कल्पित है।

इदं प्रपञ्चं नास्त्येव नोत्पन्नमिदं जगत् ?

यह जगत प्रपंच मुझ सर्वत्र व्यापक में न उत्पन्न हुआ है और न स्थित है अर्थात तीन काल में कुछ बना ही नहीं।

न निरोधोन चोत्पत्तिर्न बद्धो न च साधकः ।
न मुमुक्षुर्नवै मुक्त इत्येषा परमार्थता ।।

न उत्पत्ति है न नाश है न कोई बन्धन है न साधक है न मुमुक्षु है और न कोई मुक्त है यही परमार्थ सत्ता है ।

हे गुरुदेव आपकी जय हो आपने कृपा कर, मुझको अज्ञान निन्द्रा में सोये हुये को जगाकर स्वयं स्वरूप में स्थित कर दिया अब मुझ में कोई कर्तव्य नहीं मैं कृतकृत हूँ ।

शास्त्रीयेणैव मार्गेणावर्तेऽह मम का क्षतिः ।।अवधूतो०।।

लोक हित यदि मैं शास्त्रानुसार वर्ताव करूँ तो इसमें अब मेरी क्या हानी है । (अवधूतो०)

देवार्चनस्नानशौचभिक्षादौ वर्ततावपुः ।
तारं जपतुवाक्त द्वत्पठत्वाम्नायमस्तकम ।।२५।।
विष्णुध्यायतु धीर्यद्वा ब्रह्मानन्दे विलीयताम ।
साक्ष्यहं किञ्चिदप्यत्र न कुर्वेनापि कारये ।।२६।।

देव पूजा, स्नान, शौच, भिक्षा, आदि में भले ही शरीर प्रवृत हो, वाणी ॐकार का जप करे, अथवा वेदान्त शास्त्रों का पाठ करे, बुद्धि विष्णु का ध्यान करे, अथवा ब्रह्मानन्द में विलीन रहे, मैं तो केवल साक्षी मात्र हूँ, न मैं कुछ करता हूँ न किसी से कुछ कराता हूँ । (अवधूतो० २५/२६)

कृतकृत्यतयातृप्तः प्राप्त प्राप्यतया पुनः ।
तृप्यन्नेवंस्वमनसा मन्येऽसौ निरन्तरः ।।२७।।

मैं कृत कृत होने से तृप्त हूं, और जो प्राप्त करना था उसे मैंने कर लिया है। इससे भी तृप्त हूँ, इस प्रकार ज्ञानी पुरुष अपने मन में मानता रहता है ।।अ०।।

धन्योऽहं धन्योऽहं नित्यं स्वात्मानमञ्जसावेदिम् ।
धन्योऽहं धन्योऽहं ब्रह्मानन्दोविभातिमे स्पष्टम् ।।२८।।

मैं धन्य हूँ, मैं धन्य हूँ, क्योंकि मैं अपने आत्म स्वरूप को अनायास जानता हूँ। मैं धन्य हूँ, मैं धन्य हूँ, क्योंकि मझे ब्रह्मानंद का स्पष्ट भान हो रहा है।

धन्योऽहं धन्योऽहं दुःखं सांसारिकंन विक्षेऽद्य ।
धन्योऽहं धन्याऽहं स्वस्याज्ञानं पलायितं क्वापि ।।२९।।

मैं धन्य हूँ, मैं धन्य हूँ, क्योंकि संसार का दुख अब मैं नहीं देखता मैं धन्य हूँ, मैं धन्य हूँ, क्योंकि मेरा अज्ञान कभी का नष्ट हो चुका है।

धन्योऽहं धन्योऽहं कर्त्तव्यं मेन विद्यते किंचित् ।
धन्योऽहं धन्योऽहं प्राप्तव्यं सर्वमत्र सम्पन्नम् ।।३०।।

मैं धन्य हूँ, मैं धन्य हूँ, क्योंकि मुझे कोई भी कर्त्तव्य नहीं है, मैं धन्य हूँ, मैं धन्य हूँ, क्योंकि जो कुछ प्राप्त करना था वह मैंने यहि प्राप्त कर लिया है।

धन्योऽहं धन्योऽहं तृप्तेर्मेकोपमा भवेल्लोके।
धन्योऽहं धन्योऽहं धन्यो धन्यः पुर्नधन्य ॥३१॥

मैं धन्य हूं, मैं धन्य हूँ, क्योंकि मेरी तृप्ति की लोक में कोई उपमा है अर्थात् नहीं है मैं धन्य हूँ, मैं धन्य हूँ, मैं बारंबार धन्य हूँ।

अहो पुण्यमहीपुण्यं फलितं फलितं दृढम्।
अस्य पुण्यस्य संपतेरहो वयमहो वयम् ॥

अहो पुण्य ! अहो पुण्य ! इस पुण्य की सम्पत्ति दृढ़ फली है फली है अहो हम ! अहो हम (धन्य है)

अहो ज्ञानमहो ज्ञानमहो सुख महो सुखम्।
अहो शास्त्रमहो शास्त्रमहो गुरु रहो गुरुः ॥३३॥

अहो ज्ञान ! अहो ज्ञान अहो गुरु ! अहो शास्त्र वास्तव में धन्यवाद के ये सभी पात्र हैं। अवधूतोपनिषद् ॥३३॥

कुम्भक के रूप में रानी चुडाला के द्वारा ज्ञानोपदेश करने पर जब राजा शिखिर्ध्वज को ज्ञान हुआ तब अपनी तृप्ति और अनुभव कहने लगा। (योग वासिष्ठ निर्वाण प्रकरण)

हे भगवन् ! मैं आपका उत्तम और युक्ति युक्त उपदेश से जान गया हूँ कि मैं ज्ञान स्वरूप हूँ तथा कारण के न होने से यह ब्रह्म जगत का उत्पादक नहीं हो सकता है यह भी जानता हूँ।

एवंस्थिते विशुद्धोऽ स्मि विशुद्धोऽ स्मि शिवोऽस्मिवा।
नमो मह्यं परं चेत्यंन किञ्चिददिति बोधितः ।।

।। यो. वा. नि. ।।

इस प्रकार की स्थिति होने पर मैं निर्मल हूँ सर्वज्ञ हूँ शिव स्वरूप हूँ मैं अपने आपको ही प्रणाम करता हूँ क्योंकि चित् स्वरूप से भिन्न दूसरा चेत्य विषय है ही नहीं यह आपने मुझे बता दिया है ।। योग वासिष्ठ निवाण प्रकरण ।।

शाम्यामि निर्वानि परिस्थितोऽस्मि,
न यामि नोदेमि न चास्तमेमि ।
तिष्ठामि तिष्ठ स्वयथास्थितात्मा,
शिवं शुभं पावन मौनमस्मि ।।

अब मैं शान्ति का अनुभव करता हूँ, मुक्त हो गया हूँ, सब ओर से पूर्ण स्वभाव होकर स्थित हूँ, न जाता हूँ न उदित होता हूँ, और न अस्त होता हूँ, मैं जैसे स्थित हूँ, तैसे आप भी चिदेकरस

यथास्थित आत्म स्वरूप होकर स्थित हो जाइये, क्योंकि अब मैं शुद्ध और वाणी से अगम्य निरतिशय सुखमय शिव रूप बन कर बिराजित हूँ।

।। स्तुति पूर्वक आचार्य की बन्दना ।।

प्रश्नोपानिषद में महर्षि पिप्लाद द्वारा उपदेश को पाकर सुकेश आदि छः ऋषियों ने कृतार्थ हो, ब्रह्मविद्या का दान देनेवाले, सद्गुरुदेव के चरणों में पुष्पाञ्जली प्रदान कर एवं शिर झुकाकर प्रणाम करके उनका पूजन करते हुऐ कहा।

ते तमर्चयन्तन्त्वं हि नः पितायोऽस्माकम विद्यायाः परंपारं।
तारयसीति नमः परम ऋषिभ्योनमः परम ऋषिश्यः ।।

(प्रश्नोपनिषद ६।८)

भगवन्! ब्रह्मविद्या के उपदेश द्वारा नित्य अजर अमर एवं निर्भय स्वरूप आनन्दपूर्ण ब्रह्मरूप शरीर के जन्मदाता होने के कारण आप तो हमारे पिता हैं आपने ब्रह्मविद्या रूपी नौका पर बैठा कर ब्रह्मविद्या से अर्थात् जन्म मरण रोग दुख आना जाना इत्यादि महान क्लेश रूपी समुद्र से उस और पर पार के समान अपुनरावृत्ति रूप मोक्ष नामक दूसरे पार पर पहुँचा दिया है। अतः आपका पितृत्व तो अन्य (जन्म दाता) पिता की अपेक्षा भी

युक्ततर है। क्योंकि दूसरा पिता भी केवल शरीर को ही उत्पन्न करता है तो भी वह लोक में अधिक पूजनीय होता है। फिर आत्यन्तिक अभय प्रदान करने वाले आपके पूजनीयत्व के विषय में तो कहना ही क्या है? अतः ब्रह्मविद्या सम्प्रदाय के प्रवर्त्तक परमर्षि को नमस्कार हो, नमस्कार हो।

पूर्वोक्त विधि अनुसार शिष्य कृत-कृत होकर सद्गुरुदेव की विधि पूजा करके साष्टांग डंडवत प्रणाम करके परिक्रमा देकर बारंबार प्रणाम कर सद्गुरुदेव का शुभाशीर्वाद प्राप्त करके हर्षित होकर जीवन मुक्ति का विलक्षण आनन्द लूटता हुआ संसार में विसरने लगा।

॥ दोहा ॥

विक्रम संवत दो हजार सेंतालिस गुरुवार।
कार्तिक शुक्ला त्रयोदशी हुआ ग्रंथ तैयार॥
ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्ण मुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवाव शिष्यते॥
(ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः)

ब्रह्मवेता महापुरुषों को भोजन कराने का फल—

।। दोहा ।।

भोजन पुरुसत सती नार, पावत संत सुजान ।
धन्य गृहस्थ पावन भवन, कहते वेद पुरान ।।१।।
ब्रह्मवेता भोजन करत, सो घर धन्य कहाय ।
सकल विश्व की तृप्ति करे, सो फलश्रुति बताय ।।२।।
भोजन करते ब्रह्मवित्त, सो घर पावन जान ।
कोटि विप्र भोजन करे, सो फल श्रुति बख़ान ।।३।।
भोजन कर ब्रह्मवित्त को, देत वस्तु जो कोय ।
नित्यानन्द फल कोटि गुण, अधिक कहे श्रुति होय ।।४।।